



हिन्द स्वराज

मोहनदास करमचंद गाँधी

प्रस्तावना

इस विषय पर मैंने जो बीस अध्याय लिखे हैं उन्हें पाठकों के सामने रखने की मैं हिम्मत करता हूँ। जब मुझसे रहा ही नहीं गया तभी मैंने यह लिखा है। बहुत पढ़ा, बहुत सोचा, विलायत में ट्रान्सवाल डेप्युटेशन के साथ मैं चार माह रहा, उस बीच हो सका उतने हिन्दुस्तानियों के साथ मैंने सोच-विचार किया, हो सका उतने अंग्रेजों से भी मैं मिला।

अपने जो विचार मुझे आखिरी मालूम हुए उन्हें पाठकों के सामने रखना मैंने अपना फर्ज समझा। 'इण्डियन ओपीनियन' के गुजराती ग्राहक आठ सौ के करीब हैं। हर ग्राहक के पीछे कम से कम दस आदमी दिलचस्पी से यह अखबार पढ़ते हैं, ऐसा मैंने महसूस किया है। जो गुजराती नहीं जानते वे दूसरों से पढ़वाते हैं। इन भाइयों ने हिन्दुस्तान की हालत के बारे में मुझसे बहुत सवाल किये हैं। ऐसे ही सवाल मुझसे विलायत में किये गये थे। इसलिए मुझे लगा कि जो विचार मैंने यों खानगी में बताये उन्हें सबके सामने रखना गलत नहीं होगा।

जो विचार यहां रखे गये हैं, वे मेरे हैं और मेरे नहीं भी हैं। वे मेरे हैं, क्योंकि उनके मुताबिक बरतने की मैं उम्मीद रखता हूँ, वे मेरी आत्मा में गढ़े-जड़े हुए जैसे हैं। वे मेरे नहीं हैं, क्योंकि सिर्फ मैंने ही उन्हें सोचा हो सो बात नहीं। कुछ किताबें पढ़ने के बाद वे बने हैं। दिल में भीतर ही भीतर मैं जो महसूस करता था उसका इन किताबों ने समर्थन किया।

यह साबित करने की जरूरत नहीं कि जो विचार मैं पाठकों के सामने रखता हूँ वे हिन्दुस्तान में जिन पर (पश्चिमी) सभ्यता की धुन सवार नहीं हुई है ऐसे बहुतेरे हिन्दुस्तानियों के हैं। लेकिन यही विचार यूरोप के हजारों लोगों के हैं, यह मैं अपने पाठकों के मन में अपने सबूतों से ही जंचाना चाहता हूँ जिसे इसकी खोज करनी हो, जिसे ऐसे ऐसी फुरसत हो, वह आदमी वे किताबें देख सकता है। अपनी फुरसत से उन किताबों में से कुछ न कुछ पाठकों के सामने रखने की मेरी उम्मीद है।

'इण्डियन ओपीनियन' के पाठकों या औरों के मन में मेरे लेख पढ़कर जो विचार आयें, उन्हें अगर वे मुझे बतायेंगे तो मैं उनका आभारी रहूँगा।

उद्देश्य सिर्फ देश की सेवा करने का और सत्य की खोज करने का और उसके मुताबिक बरतने का है। इसलिए अगर मेरे विचार गलत साबित हों, तो उन्हें पकड़ रखने का मेरा आग्रह नहीं है। अगर वे सच साबित हों तो दूसरे लोग भी उनके मुताबिक बरतें, ऐसी देश के भले के लिए साधारण तौर पर मेरी भावना रहेगी।

1. कांग्रेस और उसके कर्ता-धर्ता

पाठक: आजकल हिन्दुस्तान में स्वराज्य की हवा चल रही है। सब हिन्दुस्तानी आजाद होने के लिए तरस रहे हैं। दक्षिण अफ्रीका में भी वही जोश दिखाई दे रहा है। हिन्दुस्तानियों में अपने हक पाने की बड़ी हिम्मत आई हुई मालूम होती है। इस बारे में क्या आप अपने खयाल बतायेंगे?

संपादक: आपने सवाल ठीक पूछा है। लेकिन इसका जवाब देना आसान बात नहीं है। अखबार का एक काम तो है लोगों की भावनायें जानना और उन्हें जाहिर करना। दूसरा काम है लोगों में अमुक जरूरी भावनायें पैदा करना और तीसरा काम है लोगों में दोष हों तो चाहे जितनी मुसीबतें आने पर भी बेधड़क होकर उन्हें दिखाना। आपके सवाल का जवाब देने में ये तीनों काम साथ-साथ आ जाते हैं। लोगों की भावनायें कुछ हद तक बतानी होंगी, न हों वैसी भावनायें, उनमें

पैदा करने की कोशिश करनी होगी और उनके दोषों की निंदा भी करनी होगी। फिर भी आपने सवाल किया है, इसलिए उसका जवाब देना मेरा फर्ज मालूम होता है।

पाठक: क्या स्वराज्य की भावना हिन्द में पैदा हुई, आप देखते हैं?

संपादक: वह तो जब से नेशनल कांग्रेस कायम हुई तभी से देखने में आई है। नेशनल शब्द का अर्थ ही वह विचार जाहिर करता है।

पाठक: यह तो आपने ठीक नहीं कहा। नौजवान हिन्दुस्तानी आज कांग्रेस की परवाह ही नहीं करते। वे तो उसे अंग्रेजों का राज्य निभाने का साधन मानते हैं।

संपादक: नौजवानों का ऐसा खयाल ठीक नहीं है। हिन्द के दादा 'दादाभाई नौरोजी' ने जमीन तैयार नहीं की होती तो नौजवान आज जो बातें कर रहे हैं वह भी कर पाते। मि. ह्यूम ने जो लेख लिखे, जो फटकारें हमें सुनाई जिस जोश से हमें जगाया उसे कैसे भुलाया जाय? सर विलियम वेडरबर्न ने कांग्रेस का मकसद हासिल करने के लिए अपना तन-मन और धन सब दे दिया था। उन्होंने अंग्रेजी राज्य के बारे में जो लेख लिखे हैं वे आज भी पढ़ने लायक हैं।

प्रोफेसर गोखले ने जनता को तैयार करने के लिए भिखारी के जैसी हालत में रहकर अपने बीस साल दिये हैं। आज भी वे गरीबी में रहते हैं। मरहूम जस्टिस बदरुद्दीन ने भी कांग्रेस के जरिये स्वराज्य का बीज बोया था। यों बंगाल, मद्रास, पंजाब वगैरा में कांग्रेस का और हिन्द का भला चाहने वाले कई हिन्दुस्तानी और अंग्रेज लोग हो गये हैं, यह याद रखना चाहिये।

पाठक: ठहरिये, ठहरिये आप बहुत आगे बढ़ गये, मेरा सवाल कुछ है और आप जवाब कुछ और दे रहे हैं। मैं स्वराज्य की बात करता हूँ और आप परराज्य की बात करते हैं। मुझे अंग्रेजों का नाम तक नहीं चाहिये और आप तो अंग्रेजों के नाम देने लगे। इस तरह तो हमारी गाड़ी राह पर आये, ऐसा नहीं दिखता। मुझे तो स्वराज्य की ही बातें अच्छे लगती हैं। दूसरी मीठी सयानी बातों से मुझे संतोष नहीं होगा।

संपादक: आप अधीर हो गये हैं। मैं अधीरपन बरदाश्त नहीं कर सकता। आप जरा सब्र करेंगे तो आपको जो चाहिये वही मिलेगा। 'उतावली से आम नहीं पकते दाल नहीं चुरती' यह कहावत याद रखिये। आपने मुझे रोका और आपको हिन्द पर उपकार करने वालों की बात भी सुननी अच्छी नहीं लगती, यह बताता है कि अभी आपके लिए स्वराज्य दूर है। आपके जैसे बहुत से हिन्दुस्तानी हों तो हम स्वराज्य से दूर हट कर पिछड़ जायेंगे। यह बात जरा सोचने लायक है।

पाठक: मुझे तो लगता है कि ये गोल-मोल बातें बनाकर आप मेरे सवाल का जवाब उड़ा देना चाहते हैं। आप जिन्हें हिन्दुस्तान पर उपकार करनेवाले मानते हैं, उन्हें मैं ऐसा नहीं मानता। फिर मुझे किस के उपकार की बात सुननी है, आप जिन्हें हिन्द के दादा कहते हैं उन्होंने क्या उपकार किया? वे तो कहते हैं कि अंग्रेज राजकर्ता न्याय करेंगे और उनसे हमें हिलमिल कर रहना चाहिये।

संपादक : मुझे सविनय आपसे कहना चाहिये कि उस पुरुष के बारे में आपका बेअदबी से यों बोलना हमारे लिए शरम की बात है। उनके कामों की ओर देखिये उन्होंने अपना जीवन हिन्द को अर्पण कर दिया है। उनसे यह सबक हमने सीखा कि हिन्द का खून अंग्रेजों ने चूस लिया है, यह सिखाने वाले माननीय दादाभाई हैं। आज उन्हें अंग्रेजों पर भरोसा है, उससे क्या हम जवानी के जोश में एक कदम आगे रखते हैं? इससे क्या दादाभाई कम पूज्य हो जाते हैं? उससे क्या हम ज्यादा ज्ञानी हो गये?

जिस सीढ़ी से हम ऊपर चढ़े उसको लात न मारने में ही बुद्धिमानी है। अगर वह सीढ़ी निकाल दें तो सारी निसैनी गिर जाय, यह हमें याद रखना चाहिये। हम बचपन से जवानी में आते हैं। तब बचपन से नफरत नहीं करते बल्कि उन दिनों को प्यार से याद करते हैं। बरसों तक अगर मुझे कोई पढ़ाता है और उससे मेरी जानकारी जरा बढ़ जाती है तो इससे मैं अपने शिक्षक से ज्यादा ज्ञानी नहीं माना जाऊंगा। अपने शिक्षक को तो मुझे मान देना ही पड़ेगा। इसी तरह हिन्द के दादा के बारे में समझना चाहिये। उनके पीछे (सारी) हिन्दुस्तानी जनता है, यह तो हमें कहना ही पड़ेगा।

पाठक: यह आपने ठीक कहा। दादाभाई नौरोजी की इज्जत करना चाहिये। यह तो समझ सकते हैं। उन्हें और उनके जैसे दूसरे पुरुषों ने जो काम किये हैं उनके बगैर हम आज का जोश महसूस नहीं कर पाते हैं। यह बात ठीक लगती है।

लेकिन यही बात प्रोफेसर गोखले साहब के बारे में हम कैसे मान सकते हैं? वे तो अंग्रेजों के बड़े भाईबंद बन कर बैठे हैं, वे तो कहते हैं कि अंग्रेजों से हमें बहुत कुछ सीखना है। अंग्रेजों की राजनीति से हम वाकिफ हो जाये, तभी स्वराज्य की बातचीत की जाय। उन साहब के भाषणों से तो मैं ऊब गया हूँ।

संपादक: आप ऊब गये हैं, यह दिखता है कि आपका मिजाज उतावला है। लेकिन जो नौजवान अपने मां-बाप के ठंडे मिजाज से ऊब जाते हैं और वे (मां-बाप) अगर अपने साथ न दौड़ें तो गुस्सा होते हैं, वे अपने मां-बाप का अनादर करते हैं ऐसा हम समझते हैं। प्रोफेसर गोखले के बारे में भी ऐसा ही समझना चाहिये। क्या हुआ अगर प्रोफेसर गोखले हमारे साथ नहीं दौड़ते हैं? स्वराज्य भुगतने की इच्छा रखनेवाली प्रजा अपने बुजुर्गों का तिरस्कार नहीं कर सकती। अगर दूसरे की इज्जत करने की आदत हम खो बैठें, तो हम निकम्मे हो जायेंगे। जो प्रौढ़ और तजुरबेकार है, वे ही स्वराज्य भुगत सकते हैं, न कि वे-लगाम लोग। और देखिये कि जब प्रोफेसर गोखले ने हिन्दुस्तान की शिक्षा के लिए त्याग किया तब ऐसे कितने हिन्दुस्तानी थे? मैं तो खास तौर पर और हिन्दुस्तान का हित मानकर करते हैं। हिन्द के लिए अगर अपनी जान भी देनी पड़े तो वे दे देंगे, ऐसी हिन्द के लिए उनकी भक्ति है। वे जो कुछ कहते हैं वह किसी की खुशामद करने के लिए नहीं, बल्कि सही मानकर कहते हैं। इसलिए हमारे मन में उनके लिए पूज्य भाव होना चाहिये।

पाठक: तो क्या वे साहब जो कहते हैं उसके मुताबिक हमें भी करना चाहिये?

संपादक: मैं ऐसा कुछ नहीं कहता। अगर हम शुद्ध बुद्धि से अलग राय रखते हैं, तो उस राय के मुताबिक चलने की सलाह खुद प्रोफेसर साहब हमें देंगे। हमारा मुख्य काम तो यह है कि हम उनके कामों की निन्दा न करें, हमसे वे महान हैं ऐसा माने और यकीन रखे कि उनके मुकाबिले मैं हमने हिन्द के लिए कुछ भी नहीं किया है। उनके बारे में कुछ अखबार जो अशिष्टतापूर्वक लिखते हैं उसकी हमें निन्दा करनी चाहिये और प्रोफेसर गोखले जैसों को हमें स्वराज्य के स्तंभ मानना चाहिये। उनके खयाल गलत और हमारे ही सही हैं या हमारे खयालों के मुताबिक न बरतने वाले देश के दुश्मन हैं, ऐसा मान लेना बुरी-बुरी भावना है।

पाठक: आप जो कुछ कहते हैं वह अब मेरी समझ में कुछ आता है। फिर भी मुझे उसके बारे में सोचना होगा। पर मि. हयूम, सर विलियम वेडरबर्न वगैरा के बारे में आपने जो कहा उसमें तो हद हो गई।

संपादक: जो नियम हिन्दुस्तानियों के बारे में हैं, वही अंग्रेजों के बारे में समझना चाहिये। सारे के सारे अंग्रेज बुरे हैं, ऐसा तो मैं नहीं मानूंगा। बहुत से अंग्रेज चाहते हैं कि हिन्दुस्तान को स्वराज्य मिले। उस प्रजा में स्वार्थ ज्यादा है, यह ठीक है, लेकिन उससे हर एक अंग्रेज बुरा है, ऐसा साबित नहीं होता। जो हक न्याय चाहते हैं उन्हें सबके साथ न्याय करना होगा। सर विलियम हिन्दुस्तान का बुरा चाहनेवाले नहीं है, इतना हमारे लिए काफी है। ज्यों ज्यों हम आगे बढ़ेंगे त्यों-त्यों आप देखेंगे कि अगर हम न्याय की भावना से काम लेंगे तो हिन्दुस्तान का छुटकारा जल्दी होगा। आप यह भी देखेंगे कि अगर हम तमाम अंग्रेजों से द्वेष करेंगे, तो उससे स्वराज्य दूर ही जानेवाला है लेकिन अगर उनके साथ भी न्याय करेंगे तो स्वराज्य के लिए हमें उनकी मदद मिलेगी।

पाठक: अभी तो ये सब मुझे फिजूल की बड़ी-बड़ी बातें लगती हैं। अंग्रेजों की मदद मिले और उससे स्वराज्य मिल जाय ये तो आपने दो उलटी बातें कहीं, लेकिन इस सवाल का हल अभी मुझे नहीं चाहिये। उसमें समय बिताना बेकार है। स्वराज्य कैसे मिलेगा, यह जब आप बतायेंगे तब शायद आपके विचार में समझ सकूँ। फिलहाल तो अंग्रेजों की मदद की आपकी बात ने मुझे शंका में डाल दिया है और आपके विचारों के खिलाफ मुझे भरमा दिया है। इसलिए यह बात आप आगे न बढ़ायें तो अच्छा हो।

संपादक: मैं अंग्रेजों की बात को बढ़ाना नहीं चाहता। आप शंका में पड़ गये, इसकी कोई फिकर नहीं मुझे। जो महत्वपूर्ण बात कहनी है, उसे पहले से ही बता देना ठीक होगा। आपकी शंका को धीरज से दूर करना मेरा फर्ज है।

पाठक: आपकी यह बात मुझे पसन्द आयी। इससे मुझे जो ठीक लगे वह बात कहने की मुझ में हिम्मत आई है। अभी मेरी एक शंका रह गई है। कांग्रेस के आरंभ से स्वराज्य की नींव पड़ी, यह कैसे कहा जा सकता है?

संपादक : देखिये कांग्रेस ने अलग अलग जगहों पर हिन्दुस्तानियों को इकट्ठा करके उनमें हम एक राष्ट्र हैं, ऐसा जोश पैदा किया। कांग्रेस पर सरकार की कड़ी नजर रहती थी। महमूल का हक प्रजा को होना चाहिये, ऐसी मांग कांग्रेस ने

हमेशा की है। जैसा स्वराज्य कैंनेडा में है वैसा स्वराज्य कांग्रेस ने हमेशा चाहा है। वैसा स्वराज्य मिलेगा या नहीं मिलेगा, वैसा स्वराज्य हमें चाहिये या नहीं चाहिये, उससे बढ़कर दूसरा कोई स्वराज्य है या नहीं, यह सवाल अलग है।

मुझे दिखाना तो इतना ही है कि कांग्रेस ने हिन्द को स्वराज्य का रस चखाया, इसका जस कोई और लेना चाहे तो वह ठीक न होगा और हम भी ऐसा मानें तो बेकदर ठहरेंगे। इतना ही नहीं, बल्कि जो मकसद हम हासिल करना चाहते हैं, उसमें मुसीबतें पैदा होंगी। कांग्रेस को अलग समझने और स्वराज्य के खिलाफ मानने से हम उसका उपयोग नहीं कर सकते।

2. बंग-भंग

पाठक: आप कहते हैं उस तरह विचार करने पर यह ठीक लगता है कि कांग्रेस ने स्वराज्य की नींव डाली लेकिन यह तो आप मानेंगे कि वह सही जागृति नहीं थी। सही जागृति कब और कैसे हुई?

संपादक: बीज हमेशा हमें दिखाई नहीं देता। वह अपना काम जमीन के नीचे करता है और जब खुद मिट जाता है तब पेड़ जमीन के ऊपर देखने में आता है। कांग्रेस के बारे में ऐसा ही समझिये। जिसे आप सही जागृति मानते हैं वह तो बंग-भंग से हुई जिसके लिए हम लार्ड कर्जन के आभारी हैं। बंग-भंग के वक्त बंगालियों ने कर्जन साहब से बहुत प्रार्थना की लेकिन वे साहब अपनी सत्ता के मद में लापरवाह रहे।

उन्होंने मान लिया कि हिन्दुस्तानी लोग सिर्फ बकवास ही करेंगे। उनसे कुछ भी नहीं होगा। उन्होंने अपमान भरी भाषा का उपयोग किया और जबरदस्ती बंगाल के टुकड़े किये। हम यह मान सकते हैं कि उस दिन से अंग्रेजी राज्य के भी टुकड़े हुए। बंग-भंग से जो धक्का अंग्रेजी हुकूमत को लगा वैसा और किसी काम से नहीं लगा। इसका मतलब यह नहीं कि जो दूसरे गैर इन्साफ हुए वे बंग-भंग से कुछ कम थे। नमक महसूल कुछ कम गैर इन्साफ नहीं है। ऐसा और तो आगे हम बहुत देखेंगे। लेकिन बंगाल के टुकड़े करने का विरोध करने के लिए प्रजा तैयार थी।

उस वक्त प्रजा की भावना बहुत तेज थी। उस समय बंगाल के बहुतेरे नेता अपना सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार थे। अपनी सत्ता अपनी ताकत को वे जानते थे। इसलिए तुरन्त आग भड़क उठी। अब वह बुझने वाली नहीं है, उसे बुझाने की जरूरत भी नहीं है। ये टुकड़े कायम नहीं रहेंगे। बंगाल फिर एक हो जायगा लेकिन अंग्रेजी जहाज में जो दरार पड़ी है वह तो हमेशा रहेगी ही। वह दिन-ब-दिन चौड़ी होती जायगी।

जागा हुआ हिन्द फिर सो जाय, यह नामुमकिन है। बंग-भंग को रद्द करने की मांग स्वराज्य की मांग के बराबर है। बंगाल के नेता यह बात खूब जानते हैं। अंग्रेजी हुकूमत भी यह बात समझती है। इसीलिए टुकड़े रद्द नहीं हुए। ज्यों दिन बीतते जाते हैं, त्यों त्यों प्रजा तैयार होती जाती है। प्रजा एक दिन में नहीं बनती। उसे बनने में कई बरस लग जाते हैं।

पाठक: बंग-भंग के नतीजे आपने क्या देखे?

संपादक: आज तक हम मानते आये हैं कि बादशाह से अर्ज करना चाहिये और वैसा करने पर भी दाद न मिले तो दुखः सहन करना चाहिये, अलबत्ता अर्ज तो करते ही रहना चाहिये। बंगाल के टुकड़े होने के बाद लोगों ने देखा कि हमारी अर्ज के पीछे कुछ ताकत चाहिये। लोगों में कष्ट सहन करने की शक्ति चाहिये। यह नया जोश टुकड़े होने का अहम नतीजा माना जायेगा। यह जोश अखबारों के लेखों में दिखाई दिया।

लेख कड़े होने लगे, जो बात लोग डरते हुए या चोरी चुपके करते थे वह खुल्लमखुल्ला होने लगीं, लिखी जाने लगीं। स्वदेशी का आन्दोलन चला। अंग्रेजों को देखकर छोटे-बड़े सब भागते थे पर अब नहीं डरते। मार पीट से भी नहीं डरते। जेल जाने में भी उन्हें कोई हर्ज नहीं मालूम होता और हिन्द के पुत्ररत्न आज देश निकाला भुगतते हुए विदेशों में विराजमान हैं। यह चीज उस अर्ज से अलग है। यों लोगों में खलबली मच रही है। बंगाल की हवा उत्तर में पंजाब तक और (दक्षिण में) मद्रास इलाके में, कन्याकुमारी तक पहुंच गई है।

पाठक: इसके अलावा और कोई जानने लायक नतीजा आपको सूझता है?

संपादक: बंग-भंग से जैसे अंग्रेजी जहाज में दरार पड़ी है वैसे ही हममें भी दरार फूट पड़ी है। बड़ी घटनाओं के परिणाम भी यों बड़े ही होते हैं। हमारे नेताओं में दो दल हो गये हैं। एक माडरेट और दूसरा एक्स्ट्रीमिस्ट। उनको हम धीमे और उतावले कह सकते हैं। (नरम दल व गरम दल शब्द भी चलते हैं।) कोई माडरेट को डरपोक पक्ष और एक्स्ट्रीमिस्ट को हिम्मतवाला पक्ष भी कहते हैं। सब अपने अपने खयालों के मुताबिक इन दो शब्दों का अर्थ करते हैं।

यह सच है कि ये जो दो दल हुए हैं उनके बीच जहर भी पैदा हुआ है। एक दल दूसरे का भरोसा नहीं करता। दोनों एक दूसरे को ताना मारते हैं। सूरत कांग्रेस के समय करीब करीब मार पीट भी हो गई। ये जो दो दल हुए हैं वह देश के लिए अच्छी निशानी नहीं है। ऐसा मुझे तो लगता है। लेकिन मैं यह भी मानता हूँ कि ऐसे दल लम्बे अरसे तक टिकेंगे नहीं। इस तरह कब तक ये दल रहेंगे, यह तो नेताओं पर आधार रखता है।

3. अशान्ति और असंतोष

पाठक: तो आपने बंग-भंग को जागृति का कारण माना, उससे फैली हुई अशान्ति को ठीक समझा जाय या नहीं?

संपादक: इन्सान नींद में से उठता है तो अंगड़ाई लेता है। इधर उधर घूमता है और अशान्त रहता है। उसे पूरा भान आने में कुछ वक्त लगता है। उसी तरह अगर ये बंग-भंग से जागृति आई है। फिर भी बेहोशी नहीं गई है। अभी हम अंगड़ाई लेने की हालत में हैं। अभी अशान्ति की हालत है। जैसे नींद और जाग के बीच की हालत जरूरी मानी जानी चाहिये और इसलिए वह ठीक कही जायेगी। वैसे बंगाल में और उस कारण से हिन्दुस्तान में जो अशान्ति फैली है, वह भी ठीक है। अशान्ति है यह हम जानते हैं, इसलिए शान्ति का समय आने की आवश्यकता है। नींद से उठने के बाद हमेशा अंगड़ाई लेने की हालत में हम नहीं रहते। लेकिन देर सबेर अपनी शक्ति के मुताबिक पूरे जागते ही हैं। इसी तरह इस अशान्ति में से हम जरूर छूटेंगे, अशान्ति किसी को नहीं भाती।

पाठक: अशान्ति दूसरा रूप क्या है?

संपादक: अशान्ति असल में असंतोष है। उसे आजकल हम अन रेस्ट कहते हैं। कांग्रेस के जमाने में वह डिस्कन्टेन्ट कहलाता था। मि. ह्यूम हमेशा कहते थे कि हिन्दुस्तान में असंतोष फैलाने की जरूरत है। यह असंतोष बहुत उपयोगी चीज है। जब तक आदमी अपनी चालू हालत में खुश रहता है तब तक उसमें से निकलने के लिए उसे समझाना मुश्किल है। इसलिए अब हर एक सुधार के पहले असंतोष होना ही चाहिये। चालू चीज से ऊब जाने पर ही उसे फेंक देने को मन करता है। ऐसा असंतोष हममें महान हिन्दुस्तानियों की और अंग्रेजों की पुस्तकें पढ़कर पैदा हुआ है। उस असंतोष से अशान्ति पैदा हुई और उस अशान्ति में कई लोग मरे, कई बरबाद हुए, कई जेल गये, कई को देश निकाला हुआ। आगे भी ऐसा होगा और होना चाहिये। से सब लक्षण अच्छे माने जा सकते हैं। लेकिन इनका नतीजा बुरा भी आ सकता है।

4. स्वराज्य क्या है ?

पाठक: कांग्रेस ने हिन्दुस्तान को एक राष्ट्र बनाने के लिए क्या किया? बंग-भंग से जागृति कैसे हुई? अशान्ति और असंतोष कैसे फैले? यह सब जाना। अब मैं यह जानना चाहता हूँ कि स्वराज्य के बारे में आपके क्या खयाल हैं। मुझे डर है कि शायद हमारी समझ में फरक हो।

संपादक: फरक होना मुमकिन है। स्वराज्य के लिए आप हम सब अधीर बन रहे हैं लेकिन वह क्या है इस बारे में हम ठीक राय पर नहीं पहुंचे हैं। अंग्रेजों को निकाल बाहर करना चाहिये, यह विचार बहुतों के मुंह से सुना जाता है लेकिन उन्हें क्यों निकालना चाहिये, इसका कोई ठीक खयाल किया गया हो ऐसा नहीं लगता। आपसे ही एक सवाल मैं पूछता हूँ। मान लीजिये कि हम मांगते हैं उतना सब अंग्रेज हमें दे दें तो फिर उन्हें (यहां से) निकाल देने की जरूरत आप समझते हैं।

पाठक: मैं तो उनसे एक ही चीज मांगूंगा। वह है मेहरबानी करके आप हमारे मुल्क से चले जायें। यह मांग वे कबूल करें और हिन्दुस्तान से चले जायें, तब भी अगर कोई ऐसा अर्थ का अनर्थ करें कि वे यही रहते हैं तो मुझे उसकी परवाह नहीं होगी। तब फिर हम ऐसा मानेंगे कि हमारी भाषा में कुछ लोग जाना का अर्थ रहना करते हैं।

संपादक: अच्छा हम मान लें कि हमारी मांग के मुताबिक अंग्रेज चले गये, उसके बाद आप क्या करेंगे?

पाठक: इस सवाल का जवाब अभी से दिया ही नहीं जा सकता, वे किस तरह जाते हैं उस पर बाद की हालत का आधार रहेगा। मान लें कि आप कहते हैं उस तरह वे चले गये तो मुझे लगता है कि उनका बनाया हुआ विधान हम चालू रखेंगे और राजकाज कारोबार चलायेंगे। कहने से ही वे चले जायें तो हमारे पास लश्कर तैयार ही होगा। इसलिए हमें राजकाज चलाने में कोई मुश्किल नहीं आयेगी।

संपादक: आप भले ही ऐसा मानें। लेकिन मैं नहीं मानूंगा। फिर भी मैं इस बात पर ज्यादा बहस नहीं करना चाहता। मुझे तो आपके सवाल का जवाब देना है। वह जवाब मैं आपसे ही कुछ सवाल करके अच्छी तरह दे सकता हूं। इसलिए कुछ सवाल आपसे करता हूं। हम अंग्रेजों को क्यों निकालना चाहते हैं?

पाठक: इसलिए कि उनके राज कारोबार से देश कंगाल होता जा रहा है। वे हर साल देश से धन ले जाते हैं। वे अपनी ही चमड़ी के लोगों को बड़े ओहदे देते हैं। हमें सिर्फ गुलामी में रखते हैं, हमारे साथ बेअदबी का बरताव करते हैं और हमारी जरा भी परवाह नहीं करते।

संपादक : अगर वे धन बाहर न ले जायें। नम्र बन जाएं और हमें बड़े ओहदे दें तो उनके रहने में आपको कुछ हर्ज है?

पाठक: यह सवाल ही बेकार है। बाघ अपना रूप पलट दे तो उसकी भाईबन्दी से कोई नुकसान है। ऐसा सवाल आपने पूछा यह सिर्फ वक्त बरबाद करने के खातिर ही। अगर बाघ अपना स्वभाव बदल सकें तो अंग्रेज लोग अपनी आदत छोड़ सकते हैं। जो कभी होने वाला नहीं है वह होगा, ऐसा मानना मनुष्य की रीत ही नहीं है।

संपादक: कैनेडा को जो राजसत्ता मिली है, बोअर लोगों को जो राजसत्ता मिली है वैसी ही हमें मिले तो?

पाठक: यह भी बेकार सवाल है। हमारे पास उनकी तरह गोला बारूद हो तब वैसा जरूर हो सकता है। लेकिन उन लोगों के जितनी सत्ता जब अंग्रेज हमें देंगे तब हम अपना ही झंडा रखेंगे। जैसा जापान वैसा हिन्दुस्तान। अपना जंगी बेड़ा अपनी फौज और अपनी जाहोजलाली होगी और तभी हिन्दुस्तान का सारी दुनिया में बोलबाला होगा।

संपादक: यह तो आपने अच्छी तस्वीर खींची। इसका अर्थ यह हुआ कि हमें अंग्रेजी राज्य तो चाहिये पर अंग्रेज शासक नहीं चाहिये। आप बाघ का स्वभाव तो चाहते हैं लेकिन बाघ नहीं चाहते। मतलब यह हुआ कि आप हिन्दुस्तान को अंग्रेज बनाना चाहते हैं। और हिन्दुस्तान जब अंग्रेज बन जायगा तब वह हिन्दुस्तान नहीं कहा जायेगा। लेकिन सच्चा इंग्लिस्तान कहा जायेगा। यह मेरी कल्पना का स्वराज्य नहीं है।

पाठक: मैंने तो जैसा मुझे सूझता है वैसा स्वराज्य बतलाया। हम जो शिक्षा पाते हैं, वह अगर कुछ काम की हो स्पेन्सर, मिल वगैरा महान लेखकों के जो लेख हम पढ़ते हैं वे कुछ काम के हों, अंग्रेजों की पार्लियामेन्ट पार्लियामेन्टों की माता हो तो फिर बेशक मुझे तो लगता है कि हमें उनकी नकल करनी चाहिये। वह यहां तक कि जैसे वे अपने मुल्क में दूसरों को घुसने नहीं देते वैसे हम भी दूसरों को न घुसने दें। यों तो उन्होंने अपने देश में जो किया है। वैसा और जगह अभी देखने में नहीं आता इसलिए उसे तो हमें अपने देश में अपनाना ही चाहिये लेकिन अब आप अपने विचार बतलाइये।

संपादक: अभी देर है। मेरे विचार अपने आप इस चर्चा में आपको मालूम हो जायेंगे। स्वराज्य को समझना आपको जितना आसान लगता है उतना ही मुझे मुश्किल लगता है। इसलिए फिलहाल मैं आपको इतना ही समझाने की कोशिश करूंगा कि जिसे आप स्वराज्य कहते हैं वह सचमुच स्वराज्य नहीं है।

5. इंग्लैण्ड की हालत

पाठक: आप जो कहते हैं उस पर से तो मैं यही अंदाजा लगाता हूँ कि इंग्लैंड में जो राज्य चलता है वह ठीक नहीं है और हमारे लायक नहीं है।

संपादक: आपका यह खयाल सही है। इंग्लैंड में आज जो हालत है वह सचमुच दयनीय तरस खाने लायक है। मैं तो भगवान से यही मांगता हूँ कि हिन्दुस्तान की ऐसी हालत कभी न हो। जिसे आप पार्लियामेंटों की माता कहते हैं वह पार्लियामेंट तो बांझ और बेसवा है। ये दोनों शब्द बहुत कड़े हैं तो भी उसे अच्छी तरह लागू होते हैं। मैंने उसे बांझ कहा क्योंकि अब तक उस पार्लियामेंट ने अपने आप एक भी अच्छा काम नहीं किया। अगर उस पर जोर दबाव डालनेवाला कोई न हो तो वह कुछ भी न करे, ऐसी उसकी कुदरती हालत है। और वह बेसवा है क्योंकि जो मंत्रिमंडल उसे रखे उसके पास वह रहती है। आज उसका मालिक एस्क्विथ है तो कल बालफर होगा और परसों कोई तीसरा।

पाठक: आपके बोलने में कुछ व्यंग्य है। बांझ शब्द को अब तक आपने लागू नहीं किया। पार्लियामेंट लोगों की बनी है इसलिए बेशक लोगों के दबाव से ही वह काम करेगी। वही उसका गुण है। उसके ऊपर का अंकुश है।

संपादक: यह बड़ी गलत बात है। अगर पार्लियामेंट बांझ न हो तो इस तरह होना चाहिये- लोग उसमें अच्छे से अच्छे मेम्बर चुनकर भेजते हैं। मेम्बर तनखाह नहीं लेते इसलिए उन्हें लोगों की भलाई के लिए पार्लियामेंट में जाना चाहिये। लोग खुद सुशिक्षित संस्कारी माने जाते हैं इसलिए उनसे भूल नहीं होती। ऐसा हमें मानना चाहिये ऐसी पार्लियामेंट को अर्जी की जरूरत नहीं होनी चाहिये। न दबाव की। उस पार्लियामेंट का काम इतना सरल होना चाहिये कि दिन ब दिन उसका तेज बढ़ता जाय और लोगों पर उसका असर होता जाय। लेकिन इससे उलटे इतना तो सब कबूल करते हैं कि पार्लियामेंट के मेम्बर दिखावटी और स्वार्थी पाये जाते हैं। सब अपना मतलब साधने की सोचते हैं।

सिर्फ डर के कारण ही पार्लियामेंट कुछ काम करती है। जो काम आज किया वह कल उसे रद्द करना पड़ता है। आज तक एक भी चीज को पार्लियामेंट ने ठिकाने लगाया हो, ऐसी कोई मिसाल देखने में नहीं आती। बड़े सवाल की चर्चा जब पार्लियामेंट में चलती है तब उसके मेम्बर पैर फैलाकर लेटते हैं या बैठे बैठे झपकियां लेते हैं। उस पार्लियामेंट में मेम्बर इतने जोरों से चिल्लाते हैं कि सुनने वाले हैरान परेशान हो जाते हैं।

उसके एक महान लेखक ने उसे दुनिया की बातूनी जैसा नाम दिया है। मेम्बर जिस पक्ष के हों उस पक्ष के लिए अपना मत वे बगैर सोचे विचारे देते हैं। देने को बंधे हुए हैं। अगर कोई मेम्बर इसमें अपवाद रूप निकल आये तो उसकी कमबख्ती ही समझिये। जितना समय और पैसा पार्लियामेंट खर्च करती है उतना समय और पैसा अगर अच्छे लोगों को मिले तो प्रजा का उद्धार हो जाय। ब्रिटिश पार्लियामेंट महज प्रजा का खिलौना है और वह खिलौना प्रजा को भारी खर्च में डालता है। ये विचार मेरे खुद के हैं, ऐसा आप न मानें। बड़े और विचारशील अंग्रेज ऐसा विचार रखते हैं।

एक मेम्बर ने तो यहां तक कहा है कि पार्लियामेंट धार्मिक आदमी के लायक नहीं रही। दूसरे मेम्बर ने कहा है कि पार्लियामेंट एक बच्चा (बेबी) है। बच्चों को कभी आपने हमेशा बच्चे ही रहते देखा है। आज सात सौ बरस के बाद भी अगर पार्लियामेंट बच्चा ही हो तो वह बड़ी कब होगी?

पाठक: आपने मुझे सोच में डाल दिया यह सब मुझे तुरंत मान लेना चाहिये ऐसा तो आप नहीं कहेंगे आप बिलकुल निराले विचार मेरे मन में पैदा कर रहे हैं। मुझे उन्हें हजम करना होगा। अच्छा अब बेसवा शब्द का विवेचन कीजिये।

संपादक: मेरे विचारों को आप तुरन्त नहीं मान सकते यह बात ठीक है। उसके बारे में आपको जो साहित्य पढ़ना चाहिये वह आप पढ़ेंगे तो आपको कुछ खयाल आयेगा। पार्लियामेंट को मैंने बेसवा कहा, वह भी ठीक है। उसका कोई मालिक नहीं है। उसका कोई एक मालिक नहीं हो सकता लेकिन मेरे कहने का मतलब इतना ही नहीं है। जब कोई उसका मालिक बनता है जैसे प्रधानमंत्री तब भी उसकी चाल एक सरीखी नहीं रहती। जैसे बुरे हाल बेसवा के होते हैं वैसे ही सदा पार्लियामेंट के होते हैं। प्रधानमंत्री को पार्लियामेंट की थोड़ी ही परवाह रहती है। वह तो अपनी सत्ता के मद में मस्त रहता है। अपना दल कैसे जीते इसी की लगन उसे रहती है। पार्लियामेंट सही काम कैसे करे इसका वह बहुत कम विचार करता है। अपने दल को बलवान बनाने के लिए प्रधानमंत्री पार्लियामेंट से कैसे कैसे काम करवाता है

इसकी मिसालें जितनी चाहिये उतनी मिल सकती हैं। यह सब सोचने लायक है।

पाठक: तब तो आज तक जिन्हें हम देशभिमानी और ईमानदार समझते आये हैं, उन पर भी आप टूट पड़ते हैं।

संपादक: हां, यह सच है। मुझे प्रधानमंत्रियों से द्वेष नहीं है। लेकिन तर्जुबे से मैंने देखा है कि वे सच्चे देशभिमानी नहीं कहे जा सकते। जिसे हम घूस कहते हैं वह घूस वे खुल्लमखुल्ला नहीं लेते-देते इसलिए भले ही वे ईमानदार कहे जायें। लेकिन उनके पास वसीला काम कर सकता है। वे दूसरों से काम निकालने के लिए उपाधि वगैरा की घूस बहुत देते हैं। मैं हिम्मत के साथ कह सकता हूं कि उनमें शुद्ध भावना और सच्ची ईमानदारी नहीं होती।

पाठक: जब आपके ऐसे खयाल हैं तो जिन अंग्रेजों के नाम से पार्लियामेंट राज करती है उनके बारे में अब कुछ कहिये, ताकि उनके स्वराज्य का पूरा खयाल मुझे आ जाये।

संपादक: जो अंग्रेज वोटर हैं (चुनाव करते हैं), उनकी धर्म पुस्तक (बाइबल) तो है अखबार। वे अखबारों से अपने विचार बनाते हैं। अखबार अप्रामाणिक होते हैं। एक ही बात को दो शकलें देते हैं। एक दल वाले उसी बात को बड़ी बनाकर दिखलाते हैं तो दूसरे दलवाले उसी को छोटी कर डालते हैं। एक अखबारवाला किसी अंग्रेज नेता को प्रामाणिक मानेगा तो दूसरा अखबार वाला उसको अप्रामाणिक मानेगा। जिस देश में ऐसे अखबार हैं उस देश के आदमियों की कैसी दुर्दशा होगी?

पाठक: यह तो आप ही बताइये।

संपादक: उन लोगों के विचार घड़ी घड़ी में बदलते हैं। उन लोगों में यह कहावत है कि 'सात सात बरस में रंग बदलता है।' घड़ी के लोलक की तरह वे इधर उधर घूमा करते हैं। जमकर वे बैठ ही नहीं सकते। कोई दौर दमामवाला आदमी हो और उसने अगर बड़ी बड़ी बातें कर दीं या दावतें दे दीं तो वे नक्कारची की तरह उसी के ढोल पीटने लग जाते हैं। ऐसे लोगों की पार्लियामेंट भी ऐसी ही होती है। उनमें एक बात जरूर है। वह यह कि वे अपने देश को खोयेंगे नहीं। अगर किसी ने उस पर बुरी नजर डाली तो वे उसकी मिट्टी पलीद कर देंगे। लेकिन इससे उस प्रजा में सब गुण आ गये या उस प्रजा की नकल की जाय ऐसा नहीं कह सकते, अगर हिन्दुस्तान अंग्रेज प्रजा की नकल करे तो हिन्दुस्तान पागल हो जाय, ऐसा मेरा पक्का खयाल है।

पाठक: अंग्रेज प्रजा ऐसी हो गई है, इसके आप क्या कारण मानते हैं?

संपादक: इसमें अंग्रेजों का कोई खास कसूर नहीं है पर उनकी बल्कि यूरोप की आजकल की सभ्यता का कसूर है। वह सभ्यता नुकसान देह है और उससे यूरोप की प्रजा पागल होती जा रही है।

6. सभ्यता का दर्शन

पाठक: अब तो आपको सभ्यता की भी बात करनी होगी। आपके हिसाब से तो यह सभ्यता बिगाड़ करने वाली है।

संपादक: मेरे हिसाब से ही नहीं बल्कि अंग्रेज लेखकों के हिसाब से भी यह सभ्यता बिगाड़ करने वाली है। उसके बारे में बहुत किताबें लिखी गई हैं। वहां इस सभ्यता के खिलाफ मंडल भी कायम हो रहे हैं। एक लेखक ने 'सभ्यता, उसके कारण और उसकी दवा' नाम की किताब लिखी है। उसमें उसने यह साबित किया है कि यह सभ्यता एक तरह का रोग है।

पाठक: यह सब हम क्यों नहीं जानते?

संपादक: इसका कारण तो साफ है। कोई भी आदमी अपने खिलाफ जानेवाली बात करे, ऐसा शायद ही होता है। आज की सभ्यता के मोह में फंसे हुए लोग उसके खिलाफ नहीं लिखेंगे। उल्टे उसको सहारा मिले ऐसी ही बातें और दलीलें ढूँढ़ निकालेंगे। यह वे जान बूझकर करते हैं, ऐसा भी नहीं है। वे जो लिखते हैं, उसे खुद सच मानते हैं। नींद में आदमी जो सपना देखता है उसे वह सही मानता है। जब उसकी नींद खुलती है तभी उसे अपनी गलती मालूम होती है। ऐसी ही दशा सभ्यता के मोह में फंसे हुए आदमी की होती है। हम जो बातें पढ़ते हैं वे सभ्यता की हिमायत करने वालों की

लिखी बातें होती हैं। उनमें बहुत होशियार और भले आदमी हैं। उनके लेखों से हम चौंधिया जाते हैं। यों एक के बाद दूसरा आदमी उसमें फंसता जाता है।

पाठक: यह बात आपने ठीक कही। अब आपने जो कुछ पढ़ा और सोचा है, उसका खयाल मुझे दीजिये।

संपादक: पहले तो हम यह सोचें कि सभ्यता किस हालत का नाम है। इस सभ्यता की सही पहचान तो यह है कि लोग बाहरी (दुनिया) की खोजों में और शरीर के सुख में धान्यता-सार्थकता और पुरुषार्थ मानते हैं। इसकी कुछ मिसालें लें। सौ साल पहले यूरोप के लोग जैसे घरों में रहते थे उनसे ज्यादा अच्छे घरों में आज वे रहते हैं, यह सभ्यता की निशानी मानी जाती है। इसमें शरीर के सुख की बात है। इसके पहले लोग चमड़े के कपड़े पहनते थे और भालों का इस्तेमाल करते थे।

अब वे लम्बे पतलून पहनते हैं और शरीर को सजाने के लिए तरह तरह के कपड़े बनवाते हैं और भाले के बदले एक के बाद एक पांच गोलिएं छोड़ सके, ऐसी चक्करवाली बन्दूक इस्तेमाल करते हैं। यह सभ्यता की निशानी है। किसी मुल्क के लोग, जो जूते वगैरा नहीं पहनते हों, जब यूरोप के कपड़े पहनना सीखते हैं तो जंगली हालत में से सभ्य हालत में आये हुए माने जाते हैं। पहले यूरोप में लोग मामूली हल की मदद से अपने लिए जात मेहनत करके जमीन जोतते थे। उसकी जगह आज भाप के यंत्रों से हल चलाकर एक आदमी बहुत सारी जमीन जोत सकता है और बहुत-सा पैसा जमा कर सकता है। यह सभ्यता की निशानी मानी जाती है। पहले लोग कुछ ही किताबें लिखते थे और वे अनमोल मानी जाती थीं। आज हर कोई चाहे जो लिखता है और छपवाता है और लोगों के मन को भरमाता है। यह सभ्यता की निशानी है।

पहले लोग बैलगाड़ी से रोज बारह कोस की मंजिल तय करते थे। आज रेलगाड़ी से चार सौ कोस की मंजिल मारते हैं। यह तो सभ्यता की चोटी मानी गई है। यह सभ्यता जैसे जैसे आगे बढ़ती जाती है वैसे वैसे यह सोचा जाता है कि लोग हवाई जहाज से सफर करेंगे और थोड़े ही घंटों में दुनिया के किसी भी भाग में जा पहुंचेंगे। लोगों को हाथ पैर हिलाने की जरूरत नहीं रहेगी। एक बटन दबाया कि आदमी के सामने पहनने की पोशाक हाजिर हो जायेगी। दूसरा बटन दबाया कि उसे अखबार मिल जायेंगे। तीसरा दबाया कि उसके लिए गाड़ी तैयार हो जायेगी। हर समय हमेशा नये भोजन मिलेंगे। हाथ पैर का काम ही नहीं पड़ेगा। सारा काम कल से ही किया जायेगा। पहले जब लोग लड़ना चाहते थे तो एक-दूसरे का शरीर-बल आजमाते थे। आज तो तोप के एक गोले से हजारों जानें ली जा सकती हैं। यह सभ्यता की निशानी है।

पहले लोग खुली हवा में अपने को ठीक लगे उतना काम स्वतन्त्रता से करते थे। अब हजारों आदमी अपने गुजारे के लिए इकट्ठा होकर बड़े कारखानों में या खानों में काम करते हैं। उनकी हालत जानवर से भी बदतर हो गई है। उन्हें शीशे वगैरा के कारखानों में जान को जोखिम में डालकर काम करना पड़ता है। उसका लाभ पैसादार लोगों का मिलता है। पहले लोगों को मार पीटकर गुलाम बनाया जाता था। आज लोगों को पैसे का और भोग का लालच देकर गुलाम बनाया जाता है। पहले जैसे रोग नहीं थे वैसे रोग आज लोगों में पैदा हो गये हैं और उसके साथ डाक्टर खोज करने लगे हैं कि ये रोग कैसे मिटाये जायें। ऐसा करने से अस्पताल बढ़े हैं। यह सभ्यता की निशानी मानी जाती है।

पहले लोग पत्र लिखते थे। तब खास कासिद उसे ले जाता था और उसके लिए काफी खर्च लगता था। आज मुझे किसी को गालियां देने के लिए पत्र लिखना हो तो एक पैसे में मैं गालियां दे सकता हूं। किसी को मुझे मुबारक बाद देना हो तो भी मैं उसी दाम में पत्र भेज सकता हूं। यह सभ्यता की निशानी है। पहले लोग दो या तीन बार खाते थे और वह भी खुद हाथ से पकाई हुई रोटी और थोड़ी तरकारी। अब तो हर दो घंटे पर खाना चाहिये और वह यहां तक कि लोगों को खाने से फुरसत ही नहीं मिलती। और कितना कहूं यह सब आप किसी भी पुस्तक में पढ़ सकते हैं। ये सब सभ्यता की सच्ची निशानियां मानी जाती हैं। और अगर कोई भी इससे अनभिज्ञ बात समझाये तो वह भोला है ऐसा निश्चय ही मानिये।

सभ्यता तो मैंने जो बतायी वही मानी जाती है। उसमें नीति या धर्म की बात ही नहीं है। सभ्यता के हिमायती साफ कहते हैं कि उनका काम लोगों को धर्म सिखाने का नहीं है। धर्म तो ढोंग है, ऐसा कुछ लोग मानते हैं। और कुछ लोग धर्म का दम्भ करते हैं, नीति की बातें भी करते हैं। फिर भी मैं आपसे बीस बरस के अनुभव के बाद कहता हूं कि नीति

के नाम से अनीति सिखलाई जाती है। ऊपर की बातों में नीति हो ही नहीं सकती। यह कोई बच्चा भी समझ सकता है। शरीर का सुख कैसे मिले, यही आज की सभ्यता ढूंढते हैं और यही देने की वह कोशिश करती है। परन्तु वह सुख भी नहीं मिल पाता। यह सभ्यता तो अधर्म है और यह यूरोप में इतने दरजे तक फैल गयी है कि वहां के लोग आधे पागल जैसे देखने में आते हैं। उनमें सच्ची कूबत नहीं है, वे नशा करके अपनी ताकत कायम रखते हैं। एकान्त में वे बैठ ही नहीं सकते। जो स्त्रियां घर की रानियां होनी चाहियें उन्हें गलियों में भटकना पड़ता है या कोई मजदूरी करनी पड़ती है। इंग्लैंड में ही चालीस लाख गरीब औरतों को पेट के लिए सख्त मजदूरी करनी पड़ती है और आजकल इसके कारण सफजेट का आन्दोलन चल रहा है।

यह सभ्यता ऐसी है कि अगर हम धीरज धर कर बैठे रहेंगे तो सभ्यता की चपेट में आये हुए लोग खुद की जलायी हुई आग में जल मरेंगे। पैगम्बर मोहम्मद साहब की सीख के मुताबिक यह शैतानी सभ्यता है। हिन्दू धर्म इसे निरा कलजुग कहता है। मैं आपके सामने इस सभ्यता का हूबहू चित्र नहीं खींच सकता। यह मेरी शक्ति के बाहर है। लेकिन आप समझ सकेंगे कि इस सभ्यता के कारण अंग्रेज प्रजा को सड़न ने घर कर लिया है। यह सभ्यता दूसरों का नाश करने वाली और खुद नाशवान है। इससे दूर रहना चाहिये और इसीलिए ब्रिटिश और दूसरी पार्लियामेन्टें बेकार हो गई हैं। ब्रिटिश पार्लियामेन्ट अंग्रेज प्रजा की गुलामी की निशानी है, यह पक्की बात है।

आप पढ़ेंगे और सोचेंगे तो आपको भी ऐसा ही लगेगा। इसमें आप अंग्रेजों का दोष न निकालें। उन पर तो हमें दया आनी चाहिये। वे काबिल प्रजा हैं इसलिए किसी दिन उस जाल से निकल जायेंगे। ऐसा मैं मानता हूं। वे साहसी और मेहनती हैं। मूल में उनके विचार अनीति भरे नहीं हैं, इसलिए उनके बारे में मेरे मन में उत्तम खयाल ही हैं। उनका दिल बुरा नहीं है। यह सभ्यता उनके लिए कोई अमिट रोग नहीं है। लेकिन अभी वे उस रोग में फंसे हुए हैं। यह तो हमें भूलना ही नहीं चाहिये।

7. हिन्दुस्तान कैसे गया?

पाठक: आपने सभ्यता के बारे में बहुत कुछ कहा और मुझे विचार में डाल दिया। अब तो मैं इस संकट में आ पड़ा हूं कि यूरोप की प्रजा से मैं क्या लूं और क्या न लूं। लेकिन एक सवाल मेरे मन में तुरन्त उठता है, अगर आज की सभ्यता बिगाड़ करने वाली है, एक रोग है तो ऐसी सभ्यता में फंसे हुए अंग्रेज हिन्दुस्तान को कैसे ले सके? इसमें वे कैसे रह सकते हैं?

संपादक: आपके इस सवाल का जवाब अब कुछ आसानी से दिया जा सकेगा और अब थोड़ी देर में हम स्वराज्य के बारे में भी विचार कर सकेंगे। आपके इस सवाल का जवाब अभी देना बाकी है, यह मैं भूला नहीं हूं। लेकिन आपके आखिरी सवाल पर हम आयें। हिन्दुस्तान अंग्रेजों ने लिया सो बात नहीं है बल्कि हमने उन्हें दिया है। हिन्दुस्तान में वे अपने बल से नहीं टिके हैं बल्कि हमने उन्हें टिका रखा है। वह कैसे सो देखें। आपको मैं याद दिलाता हूं कि हमारे देश में वे दरअसल व्यापार के लिए आये थे। आप अपनी कंपनी बहादुर को याद कीजिये उसे बहादुर किसने बनाया। वे बेचारे ऐसे राज करने का इरादा भी नहीं रखते थे। कंपनी के लोगों की मदद किसने की? उनकी चांदी को देखकर कौन मोह में पड़ जाता था? उनका माल कौन बेचता था?

इतिहास सबूत देता है कि यह सब हम ही करते थे। जल्दी पैसा पाने के मतलब से हम उनका स्वागत करते थे। हम उनकी मदद करते थे। मुझे भांग पीने की आदत हो और भांग बेचने वाला मुझे भांग बेचे तो कसूर बेचने वाले का निकालना चाहिये या अपना खुद का? बेचने वाले का कसूर निकालने से मेरा व्यसन थोड़े ही मिटनेवाला है? एक बेचने वाले को भगा देंगे तो क्या दूसरे मुझे भांग नहीं बेचेंगे। हिन्दुस्तान के सच्चे सेवक को अच्छी तरह खोज करके इसकी जड़ तक पहुंचना होगा। ज्यादा खाने से अगर मुझे अजीर्ण हुआ हो तो मैं पानी का दोष निकाल कर अजीर्ण दूर नहीं कर सकूंगा। सच्चा डाक्टर तो वह है जो रोग की जड़ खोजे। आप अगर हिन्दुस्तान के रोग के डाक्टर होना चाहते हैं तो आपको रोग की जड़ खोजनी ही पड़ेगी।

पाठक: आप सच कहते हैं। अब मुझे समझाने के लिए आपको दलील करने की जरूरत नहीं रहेगी। मैं आपके विचार

जानने के लिए अधीर बन गया हूँ। अब हम बहुत ही दिलचस्प विषय पर आ गये हैं, इसलिए मुझे आप अपने ही विचार बतायें। जब उनके बारे में शंका पैदा होगी तब मैं आपको रोकूँगा।

संपादक: बहुत अच्छा, पर मुझे डर है कि आगे चलने पर हमारे बीच फिर से मतभेद जरूर होगा। फिर भी जब आप मुझे रोकेंगे तभी मैं दलील में उतरूँगा। हमने देखा कि अंग्रेज व्यापारियों को हमने बढ़ावा दिया तभी वे हिन्दुस्तान में अपने पैर फैला सके। वैसे ही जब हमारे राजा लोग आपस में झगड़े तब उन्होंने कंपनी बहादुर से मदद मांगी। कंपनी बहादुर व्यापार और लड़ाई के काम में कुशल थी उसमें उसे नीति अनीति की अड़चन नहीं थी। व्यापार बढ़ाना और पैसा कमाना यही उसका धंधा था। उसमें जब हमने मदद दी तब उसने हमारी मदद ली और अपनी कोठिया बढ़ाई। कोठियों का बचाव करने के लिए उसने लश्कर रखा। उस लश्कर का हमने उपयोग किया इसलिए अब उसे दोष देना बेकार है। उस वक्त हिन्दू मुसलमानों के बीच बैर था। कंपनी को उससे मौका मिला। इस तरह हमने कंपनी के लिए ऐसे संजोग पैदा किये जिससे हिन्दुस्तान पर उसका अधिकार हो जाय। इसलिए हिन्दुस्तान गया, ऐसा कहने के बजाय ज्यादा सच यह कहना होगा कि हमने हिन्दुस्तान अंग्रेजों को दिया।

पाठक: अब अंग्रेज हिन्दुस्तान को कैसे रख सकते हैं, सो कहिये?

संपादक: जैसे हमने हिन्दुस्तान उन्हें दिया वैसे ही हम हिन्दुस्तान को उनके पास रहने देते हैं। उन्होंने तलवार से हिन्दुस्तान लिया। ऐसा उनमें से कुछ कहते हैं और ऐसा भी कहते हैं कि तलवार से वे उसे रख रहे हैं। ये दोनों बातें गलत हैं। हिन्दुस्तान को रखने के लिए तलवार किसी काम में नहीं आ सकती। हम खुद ही उन्हें यहां रहने देते हैं।

नेपोलियन ने अंग्रेजों को व्यापारी प्रजा कहा है। वह बिल्कुल ठीक बात है। वे जिस देश को (अपने काबू) में रखते हैं उसे व्यापार के लिए रखते हैं। यह जानने लायक है। उनकी फौजें और जंगी बेड़े सिर्फ व्यापार की रक्षा के लिए हैं। जब ट्रान्सवाल में व्यापार का लालच नहीं था तब मि. ग्लेडस्टन को तुरन्त सूझ गया कि ट्रान्सवाल पर अंग्रेजों की हुकूमत है। मरहूम प्रेसिडेंट कूगर से किसी ने सवाल किया चांद में सोना है या नहीं? उसने जवाब दिया चांद में सोना होने की संभावना नहीं है क्योंकि सोना होता तो अंग्रेज अपने राज के साथ उसे जोड़ देते। पैसा उनका खुदा है यह ध्यान में रखने से सब बातें साफ हो जायेंगी। तब अंग्रेजों को हम हिन्दुस्तान में सिर्फ अपनी गरज से रखते हैं। हमें उनका व्यापार पसन्द आता है। वे चालबाजी करके हमें रिझाते हैं और रिझाकर हमसे काम लेते हैं। इसमें उनका दोष निकालना उनकी सत्ता को निभाने जैसा है। इसके अलावा हम आपस में झगड़कर उन्हें ज्यादा बढ़ावा देते हैं।

अगर आप ऊपर की बात को ठीक समझते हैं तो हमने यह साबित कर दिया कि अंग्रेज व्यापार के लिए यहां आये, व्यापार के लिए यहां रहते हैं और उनके रहने में हम ही मददगार हैं। उनके हथियार तो बिल्कुल बेकार हैं।

इस मौके पर मैं आपको याद दिलाता हूँ कि जापान में अंग्रेजी झंडा लहराता है। ऐसा आप मानिये। जापान के साथ अंग्रेजों ने जो करार किया है वह अपने व्यापार के लिए किया है। और आप देखेंगे कि जापान में अंग्रेज लोग अपना व्यापार खूब जमायेंगे। अंग्रेज अपने माल के लिए सारी दुनिया को अपना बाजार बनाना चाहते हैं। यह सच है कि ऐसा वे नहीं कर सकेंगे, इसमें उनका कोई कसूर नहीं माना जा सकता। अपनी कोशिश में वे कोई कसर नहीं रखेंगे।

8. हिन्दुस्तान की दशा

पाठक: हिन्दुस्तान अंग्रेजों के हाथ में क्यों है, यह समझा जा सकता है। अब मैं हिन्दुस्तान की हालत के बारे में आपके विचार जानना चाहता हूँ।

संपादक: आज हिन्दुस्तान की रंक दशा है। यह आपसे कहते हुए मेरी आंखों में पानी भर आता है और गला सूख जाता है। यह बात मैं आपको पूरी तरह समझा सकूँगा या नहीं इस बारे में मुझे शक है। मेरी पक्की राय है कि हिन्दुस्तान अंग्रेजों से नहीं बल्कि आजकल की सभ्यता से कुचला जा रहा है। उसकी चपेट में वह फंस गया है।

उसमें से बचने का अभी उपाय है लेकिन दिन-ब-दिन समय बीतता जा रहा है। मुझे तो धर्म प्यारा है। इसलिए पहला दुख मुझे यह है कि हिन्दुस्तान धर्मभ्रष्ट होता जा रहा है। धर्म का अर्थ मैं यहां हिन्दू मुस्लिम या जरथोस्ती धर्म नहीं

करता लेकिन इन सब धर्मों के अन्दर जो धर्म है वह हिन्दुस्तान से जा रहा है। हम ईश्वर से विमुख होते जा रहे हैं।

संपादक: हिन्दुस्तान पर यह तोहमत है कि हम आलसी हैं और गोरे लोग मेहनती और उत्साही हैं। इसे हमने मान लिया है। इसलिए हम अपनी हालत को बदलना चाहते हैं। हिन्दू, मुस्लिम, जरथोस्ती, ईसाई सब धर्म सिखाते हैं कि हमें दुनियावी बातों के बारे में मंद और धार्मिक बातों के बारे में उत्साही रहना चाहिये। हमें अपने दुनियावी लोभ की हद बांधनी चाहिये और धार्मिक लोभ को खुला छोड़ देना चाहिये। हमारा उत्साह धार्मिक लोभ में ही रहना चाहिये।

पाठक: इससे तो मालूम होता है कि आप पाखंडी बनने की तालीम देते हैं। धर्म के बारे में ऐसी बातें करके ठग लोग दुनिया को ठगते आये हैं और आज भी ठग रहे हैं।

संपादक: आप धर्म पर गलत आरोप लगाते हैं। पाखंड तो सब धर्मों में है। जहां सूरज है वहां अंधेरा रहता ही है। परछाई हर एक चीज के साथ जुड़ी रहती है। धार्मिक ठगों को आप दुनियावी ठगों से अच्छे पायेंगे। सभ्यता में जो पाखंड में आपको बता चुका हूं वैसा पाखंड धर्म में मैंने कभी कहीं देखा नहीं।

पाठक: यह कैसे कहा जा सकता है धर्म के काम पर हिन्दू मुसलमान लड़े, धर्म के नाम पर ईसाइयों में बड़े बड़े युद्ध हुए। धर्म के नाम पर हजारों बेगुनाह लोग मारे गये। उन्हें जला दिया गया। उन पर बड़ी बड़ी मुसीबतें गुजारी गईं। यह तो सभ्यता से बदतर ही माना जायगा।

संपादक: तो मैं कहूंगा कि यह सब सभ्यता के दुख से ज्यादा बरदाश्त हो सकने जैसा है। आपने जो कुछ कहा वह पाखंड है ऐसा सब लोग समझते हैं। इसलिए पाखंड में फंसे हुए लोग मर गये कि सारा सवाल हल हो गया। जहां भोले लोग हैं वहां ऐसा ही चलता रहेगा लेकिन उसका असर हमेशा के लिए बुरा नहीं रहता। सभ्यता की होली में जो लोग जल मरे हैं उनकी तो कोई हद ही नहीं है। उसकी खूबी यह है कि लोग उसे अच्छा मानकर उसमें कूद पड़ते हैं। फिर वे न तो रहते दीन के और न रहते दुनिया के। वे सच बात को बिलकुल भूल जाते हैं।

सभ्यता चूहे की तरह फूँककर काटती है। उसका असर जब हम जानेंगे तब पुराने वहम मुकाबले में हमें मीठे लगेंगे। मेरा कहना यह नहीं कि हमें उन वहमों को कायम रखना चाहिये। नहीं, उनके खिलाफ तो हम लड़ेंगे ही लेकिन वह लड़ाई धर्म को भूल कर नहीं लड़ी जायेगी बल्कि सही तौर पर धर्म को समझकर और उसकी रक्षा करके लड़ी जायेगी।

पाठक: तब तो आप यह भी कहेंगे कि अंग्रेजों ने हिन्दुस्तान में शान्ति का जो सुख हमें दिया है वह बेकार है।

संपादक: आप भले शांति देखते हों पर मैं तो शान्ति का सुख नहीं देखता।

पाठक: तब तो ठग, पिंडारी, भील वगैरा देश में जो त्रास गुजारते थे उसमें आपके खयाल से कोई बुराई नहीं थी?

संपादक: आप जरा सोचेंगे तो मालूम होगा कि उनका त्रास बहुत कम था। अगर सचमुच उनका त्रास भयंकर होता तो प्रजा का जड़ मूल से कभी का नाश हो जाता और हाल की शान्ति तो नाम की ही है। मैं यह कहना चाहता हूं कि इस शान्ति से हम नामर्द, नपुंसक और डरपोक बन गये हैं। भीलों और पिंडारियों का स्वभाव अंग्रेजों ने बदल दिया है, ऐसा हम न मान लें। हम पर एक सा जुल्म होता हो तो हमें उसे बरदाश्त करना चाहिये लेकिन दूसरे लोग हमें उस जुल्म से बचावें, यह तो हमारे लिए बिलकुल कलंक जैसा है। हम कमजोर और डरपोक बनें उससे तो भीलों के तीर कमान से मरना मुझे ज्यादा पसंद है।

उस हालत में जो हिन्दुस्तान था उसका जोश कुछ दूसरा ही था। मैंकाले ने हिन्दुस्तानियों को नामर्द माना। वह उसकी अधम अज्ञान दशा को बताता है। हिन्दुस्तानी नामर्द कभी नहीं थे। यह जान लीजिये कि जिस देश में पहाड़ी लोग बसते हैं, जहां बाघ भेड़िये रहते हैं उस देश के रहनेवाले अगर सचमुच डरपोक हों तो उनका नाश ही हो जाये। आप कभी खेतों में गये हैं, मैं आपसे यकीनन कहता हूं कि खेतों में हमारे किसान आज भी निर्भय होकर सोते हैं जब कि अंग्रेज और आप वहां सोने के लिए आनाकानी करेंगे। बल तो निर्भयता में है, बदन पर मांस के लोंदे होने में बल नहीं है। आप थोड़ा भी सोचेंगे तो इस बात को समझ जायेंगे।

और आपको, जो स्वराज्य चाहने वाले हैं, मैं सावधान करता हूं कि भील, पिंडारी और ठग ये सब हमारे ही देशी भाई हैं। उन्हें जीतना मेरा और आपका काम है। जब तक आपके ही भाई का डर आपको रहेगा तब तक आप कभी मकसद हासिल नहीं कर सकेंगे।

9. हिन्दुस्तान की दशा (रेलगाडियाँ)

पाठक: हिन्दुस्तान की शान्ति के बारे में मेरा जो मोह था वह आपने ले लिया। अब तो याद नहीं आता कि आपने मेरे पास कुछ भी रहने दिया हो।

संपादक: अब तक तो मैंने आपको सिर्फ धर्म की दशा का ही खयाल कराया है। लेकिन हिन्दुस्तान रंक क्यों है, इस बारे में मैं अपने विचार आपको बताऊंगा तब तो शायद आप मुझसे नफरत ही करेंगे क्योंकि आज तक हमने और आपने जिन चीजों को लाभकारी माना है वे मुझे तो नुकसान देह ही मालूम होती हैं।

पाठक: वे क्या हैं?

संपादक: हिन्दुस्तान को रेलों ने, वकीलों ने और डाक्टरों ने कंगाल बना दिया है। यह एक ऐसी हालत है कि अगर हम समय पर नहीं चेतेंगे तो चारों ओर से घिर कर बर्बाद हो जायेंगे।

पाठक: मुझे डर है कि हमारे विचार कभी मिलेंगे या नहीं। आपने तो जो कुछ अच्छा देखने में आया है और अच्छा माना गया है, उसी पर धावा बोल दिया है! अब बाकी क्या रहा?

संपादक: आपको धीरज रखना होगा। सभ्यता नुकसान करने वाली कैसे है, यह तो मुश्किल से मालूम हो सकता है। डाक्टर आपको बतलायेंगे कि क्षय का मरीज मौत के दिन तक भी जीने की आशा रखता है। क्षय का रोग बाहर दिखाई देने वाली हानि नहीं पहुंचाता और वह रोग आदी को झूठी लाली देता है। इससे बीमार विश्वास में बहता रहता है और आखिर डूब जाता है। सभ्यता को भी ऐसा ही समझिये, वह एक अदृश्य रोग है। उससे चेत कर रहिये।

पाठक: अच्छा तो अब आप रेल पुराण सुनाइये।

संपादक: आपके दिल में यह बात तुरन्त उठेगी कि अगर रेल न हो तो अंग्रेजों का काबू हिन्दुस्तान पर जितना है उतना तो नहीं ही रहेगा। रेल से महामारी फैली है। अगर रेलगाड़ी न हो तो कुछ ही लोग एक जगह से दूसरी जगह जायेंगे और इस कारण संक्रामक रोग सारे देश में नहीं पहुंच पायेंगे। पहले हम कुदरती तौर पर ही 'सेग्रेगेशन'- सूतक पालते थे। रेल से अकाल बढ़े हैं क्योंकि रेलगाड़ी की सुविधा के कारण लोग अपना अनाज बेच डालते हैं।

जहां मंहगाई हो वहां अनाज खिंच जाता है। लोग लापरवाह बनते हैं और उससे अकाल का दुख बढ़ता है। रेल से दुष्टता बढ़ती है। बुरे लोग अपनी बुराई तेजी से फैला सकते हैं। हिन्दुस्तान में जो पवित्र स्थान थे वे अपवित्र बन गये हैं। पहले लोग बड़ी मुसीबत से वहां जाते थे। ऐसे लोग वहां सच्ची भावना से ईश्वर को भजने जाते थे। अब तो ठगों की टोली सिर्फ ठगने के लिए वहां जाती है।

पाठक: यह तो आपने इकतरफा बात कही। जैसे खराब लोग वहां जा सकते हैं, वैसे अच्छे भी तो जा सकते हैं। वे क्यों रेलगाड़ी का पूरा लाभ नहीं लेते?

संपादक: जो अच्छा होता है वह बीरबहूटी की तरह धीरे चलता है। उसकी रेल से नहीं बनती। अच्छा करनेवाले के मन में स्वार्थ नहीं रहता। वह जल्दी नहीं करेगा। वह जानता है कि आदमी पर अच्छी बात का असर डालने में बहुत समय लगता है। बुरी बात ही तेजी से बढ़ सकती है। घर बनाना मुश्किल है, तोड़ना सहज है। इसलिए रेलगाड़ी हमेशा दुष्टता का ही फैलाव करेगी। यह बराबर समझ लेना चाहिये। उससे अकाल फैलेगा या नहीं इस बारे में कोई शास्त्राकार मेरे मन में घड़ी भर शंका पैदा कर सकता है लेकिन रेल से दुष्टता बढ़ती है यह बात जो मेरे मन में जम गयी है वह मिटने वाली नहीं है।

पाठक: लेकिन रेल का सबसे बड़ा लाभ दूसरे सब नुकसानों को भुला देता है। रेल है तो आज हिन्दुस्तान में एक राष्ट्र का जोश देखने में आता है। इसलिए मैं तो कहूंगा कि रेल के आने से कोई नुकसान नहीं हुआ।

संपादक: यह आपकी भूल ही है। आपको अंग्रेजों ने सिखाया है कि आप एक राष्ट्र नहीं थे और एक राष्ट्र बनने में आपको सैकड़ों बरस लगेंगे, यह बात बिल्कुल बेबुनियाद है। जब अंग्रेज हिन्दुस्तान में नहीं थे तब हम एक राष्ट्र थे, हमारे विचार एक थे, हमारा रहन-सहन एक था, तभी तो अंग्रेजों ने यहां एक राज्य कायम किया। भेद तो हमारे बीच

बाद में उन्होंने पैदा किये।

पाठक: यह बात मुझे ज्यादा समझनी होगी।

संपादक: मैं जो कहता हूँ बिना सोचे समझे नहीं कहता। एक राष्ट्र का यह अर्थ नहीं कि हमारे बीच कोई मतभेद नहीं था लेकिन हमारे मुख्य लोग पैदल या बैलगाड़ी में हिन्दुस्तान का सफर करते थे, वे एक दूसरे की भाषा सीखते थे और उनके बीच कोई अन्तर नहीं था। जिन दूरदर्शी पुरुषों ने सेतुबंध, रामेश्वर, जगन्नाथपुरी और हरिद्वार की यात्रा ठहराई उनका आपकी राय में क्या खयाल होगा, वे मूर्ख नहीं थे। यह तो आप कबूल करेंगे। वे जानते थे कि ईश्वर भजन घर बैठे भी होता है। उन्होंने ने हमें यह सिखाया है कि मन चंगा तो कठौती में गंगा। लेकिन उन्होंने सोचा कि कुदरत ने हिन्दुस्तान को एक देश बनाया है, इसलिए वह एक राष्ट्र होना चाहिये।

इसलिए उन्होंने अलग अलग स्थान तय करके लोगों को एकता का विचार इस तरह दिया जैसा दुनिया में और कहीं नहीं दिया गया है। दो अंग्रेज जितने एक नहीं हैं उतने हम हिन्दुस्तानी एक थे और एक हैं। सिर्फ हम और आप जो खुद को सभ्य मानते हैं, उन्हीं के मन में ऐसा आभास (भ्रम) पैदा हुआ कि हिन्दुस्तान में हम अलग-अलग राष्ट्र हैं। रेल के कारण हम अपने को अलग राष्ट्र मानने लगे और रेल के कारण एक राष्ट्र का खयाल फिर से हमारे मन में आने लगा ऐसा आप मानें तो मुझे हर्ज नहीं है। अफमची कह सकता है कि अफीम के नुकसान का पता मुझे अफीम से चला इसलिए अफीम अच्छी चीज है। यह सब आप अच्छी तरह सोचिये। अभी आपके मन में और भी शंकाएं उठेंगी। लेकिन आप खुद उन सबको हल कर सकेंगे।

पाठक: आपने जो कुछ कहा उस पर मैं सोचूंगा लेकिन एक सवाल मेरे मन में इसी समय उठता है। मुसलमान हिन्दुस्तान में आये उसके पहले के हिन्दुस्तान की बात आपने की। लेकिन अब तो मुसलमानों, पारसियों ईसाइयों की हिन्दुस्तान में बड़ी संख्या है। वे एक राष्ट्र नहीं हो सकते। कहा जाता है कि हिन्दू मुसलमानों में कट्टर बैर है। हमारी कहावतें भी ऐसी ही हैं।

मियां और महादेव की नहीं बनेगी। हिन्दू पूर्व में ईश्वर को पूजता है तो मुस्लिम पश्चिम में पूजता है। मुसलमान हिन्दू को बुतपरस्व मूर्तिपूजक मानकर उससे नफरत करता है। हिन्दू मूर्ति पूजक है, मुसलमान मूर्ति को तोड़ने वाला है। हिन्दू गाय को पूजता है। मुसलमान उसे मारता है। हिन्दू अहिंसक है, मुसलमान हिंसक। यों पग पग पर जो विरोध है वह कैसे मिटे और हिन्दुतान एक हो?

10. हिन्दुस्तान की दशा (हिन्दू-मुसलमान)

संपादक: आपका आखिरी सवाल बड़ा गम्भीर मालूम होता है। लेकिन सोचने पर वह सहज मालूम होगा। यह सवाल उठा है, उसका कारण भी रेल, वकील और डाक्टर हैं। वकीलों और डाक्टरों का विचार तो अभी करना बाकी है।

रेलों का विचार हम कर चुके। इतना मैं जोड़ता हूँ कि मनुष्य इस तरह पैदा किया गया है कि अपने हाथ पैर से बने उतनी ही आने-जाने वगैरा की हलचल उसे करनी चाहिये। अगर हम रेल वगैरा साधनों से दौड़पूँ करें ही नहीं तो बहुत पेचीदे सवाल हमारे सामने आयेंगे ही नहीं। हम खुद होकर दुख को न्योतते हैं।

भगवान ने मनुष्य की हृद उसके शरीर की बनावट से ही बांध दी। लेकिन मनुष्य ने उस बनावट की हृद को लांघने के उपाय ढूँढ़ निकाले मनुष्य को अकल इसलिए दी गई है कि उसकी मदद से वह भगवान को पहचाने पर मनुष्य ने अकल का उपयोग भगवान को भूलने में किया। मैं अपनी कुदरती हृद के मुताबिक अपने आस-पास रहनेवालों की ही सेवा कर सकता हूँ पर मैंने तुरन्त अपनी मगरूरी में ढूँढ़ निकाला कि मुझे तो सारी दुनिया की सेवा अपने तन से करनी चाहिये।

ऐसा करने में अनेक धर्मों के और कई तरह के लोगों का साथ होगा। यह बोझ मनुष्य उठा ही नहीं सकता और इसलिए अकुलाता है। इस विचार से आप समझ लेंगे कि रेलगाड़ी सचमुच एक तूफानी साधन है। मनुष्य रेलगाड़ी का उपयोग करके भगवान को भूल गया है।

पाठक: पर मैं तो अब जो सवाल मैंने उठाया है उसका जवाब सुनने को अधीर हो रहा हूँ। मुसलमानों के आने से हमारा एक-राष्ट्र रहा या मिटा?

संपादक: हिन्दुस्तान में चाहे जिस धर्म के आदमी रह सकते हैं उससे वह एक राष्ट्र मिटने वाला नहीं है। जो नये लोग उसमें दाखिल होते हैं वे उसकी प्रजा को तोड़ नहीं सकते, वे उसकी प्रजा में घुलमिल जाते हैं। ऐसा हो तभी कोई मुल्क एक राष्ट्र माना जायेगा। ऐसे मुल्क में दूसरे लोगों का समावेश करने का गुण होना चाहिये। हिन्दुस्तान ऐसा था और आज भी है। यों तो जितने आदमी उतने धर्म ऐसा मान सकते हैं। एक राष्ट्र होकर रहनेवाले लोग एक दूसरे के धर्म में दखल नहीं देते। अगर देते हैं तो समझना चाहिये कि वे एक राष्ट्र होने के लायक नहीं हैं।

अगर हिन्दू मानें कि सारा हिन्दुस्तान सिर्फ हिन्दुओं से भरा होना चाहिये तो यह एक निरा सपना है। मुसलमान अगर ऐसा मानें कि उसमें सिर्फ मुसलमान ही रहें तो उसे भी सपना ही समझिये। फिर भी हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई जो इस देश को अपना वतन मानकर बस चुके हैं एक देशी, एक मुल्की हैं, वे देशी भाई हैं और उन्हें एक दूसरे के स्वार्थ के लिए भी एक होकर रहना पड़ेगा। दुनिया के किसी भी हिस्से में एक राष्ट्र का अर्थ एक धर्म नहीं किया गया है। हिन्दुस्तान में तो ऐसा था ही नहीं।

पाठक: लेकिन दोनों कौमों के कट्टर बैर का क्या?

संपादक: कट्टर बैर शब्द दोनों के दुश्मन ने खोज निकाला है। जब हिन्दू मुसलमान झगड़ते थे तब वे ऐसी बातें भी करते थे। झगड़ा तो हमारा कब का बंद हो गया है। फिर कट्टर बैर काहे का और इतना याद रखिये कि अंग्रेजों के आने के बाद ही हमारा झगड़ा बन्द हुआ, ऐसा नहीं है। हिन्दू लोग मुसलमान बादशाहों के मातहत और मुसलमान हिन्दू राजाओं के मातहत रहते आये हैं। दोनों को बाद में समझ में आ गया कि झगड़ने से कोई फायदा नहीं।

लड़ाई से कोई अपना धर्म नहीं छोड़ेगे और कोई अपनी जिद भी नहीं छोड़ेगे। इसलिए दोनों ने मिलकर रहने का फैसला किया। झगड़े तो फिर से अंग्रेजों ने शुरू करवाये। मियां और महादेव की नहीं बनती इस कहावत का भी ऐसा ही समझिये। कुछ कहावतें हमेशा के लिए रह जाती हैं और नुकसान करती ही रहती हैं। हम कहावत की धुन में इतना भी याद नहीं रखते कि बहुतेरे हिन्दुओं और मुसलमानों के बाप दादे एक ही थे। हमारे अन्दर एक ही खून है। क्या धर्म बदला इसलिए हम आपस में दुश्मन बन गये।

धर्म तो एक ही जगह पहुँचने के अलग अलग रास्ते हैं? हम दोनों अलग अलग रास्ते चलें। इससे क्या हो गया। उसमें लड़ाई काहे की और ऐसी कहावतें तो शैवों और वैष्णवों में भी चलती हैं पर इससे कोई यह नहीं कहेगा कि वे एक राष्ट्र नहीं हैं। वेदधर्मियों और जैनों के बीच बहुत फर्क माना जाता है। फिर भी इससे वे अलग राष्ट्र नहीं बन जाते। हम गुलाम हो गये हैं इसीलिए अपने झगड़े हम तीसरे के पास ले जाते हैं।

जैसे मुसलमान मूर्ति का खंडन करने वाले हैं, वैसे हिन्दुओं में भी मूर्ति का खंडन करनेवाला एक वर्ग देखने में आता है। ज्यों ज्यों सही ज्ञान बढ़ेगा त्यों त्यों हम समझते जायेंगे कि हमें पसन्द न आनेवाला धर्म दूसरा आदमी पालता हो, तो भी उससे बैरभाव रखना हमारे लिए ठीक नहीं, हम उस पर जबरदस्ती न करें।

पाठक: अब गोरक्षा के बारे में अपने विचार बताइये।

संपादक: मैं खुद गाय को पूजता हूँ यानी मान देता हूँ। गाय हिन्दुस्तान की रक्षा करनेवाली है, क्योंकि उसकी संतान पर हिन्दुस्तान का, जो खेती प्रधान देश है, आधार है। गाय कई तरह से उपयोगी जानवर है। वह उपयोगी जानवर है यह तो मुसलमान भाई भी कबूल करेंगे। लेकिन जैसे मैं गाय को पूजता हूँ वैसे मैं मनुष्य को भी पूजता हूँ। जैसे गाय उपयोगी है वैसे मनुष्य भी- फिर चाहे वह मुसलमान हो या हिन्दू- उपयोगी है। तब क्या गाय को बचाने के लिए मैं मुसलमान से लड़ूंगा? क्या उसे मैं मारूंगा?

ऐसा करने से मैं मुसलमान का और गाय का भी दुश्मन बनूंगा। इसलिए मैं कहूंगा कि गाय की रक्षा करने का एक यही उपाय है कि मुझे अपने मुसलमान भाई के सामने हाथ जोड़ने चाहिये और उसे देश के खातिर गाय को बचाने के लिए समझाना चाहिये। अगर वह न समझे तो मुझे गाय को मरने देना चाहिये क्योंकि वह मेरे बस की बात नहीं। अगर मुझे गाय पर अत्यंत दया आती हो तो अपनी जान दे देनी चाहिये, लेकिन मुसलमान की जान नहीं लेनी चाहिये।

यही धार्मिक कानून है, ऐसा मैं तो मानता हूं।

‘हां’ और ‘नहीं’ के बीच हमेशा बैर रहता है। अगर मैं वाद-विवाद करूंगा तो मुसलमान भी वाद-विवाद करेगा। अगर मैं टेढ़ा बनूंगा तो वह भी टेढ़ा बनेगा, अगर मैं बलिष्ठ भर नमूंगा, तो वह हाथ भर नमेगा, और अगर वह नहीं भी नमे तो मेरा नमना गलत नहीं कहलायेगा। जब हमने जिद की तब गोकुशी बढ़ी। मेरी राय है कि गोरक्षा प्रचारिणी सभा गोवध प्रचारिणी सभा मानी जानी चाहिये। ऐसी सभा का होना हमारे लिए बदनामी की बात है। जब गाय की रक्षा करना हम भूल गये तब ऐसी सभा की जरूरत पड़ी होगी।

मेरा भाई गाय को मारने दौड़े, तो मैं उसके साथ कैसा बरताव करूंगा? उसे मारूंगा या उसके पैरों में पड़ूंगा? अगर आप कहें कि मुझे उसके पांव पड़ना चाहिये, तो मुझे मुसलमान भाई के भी पांव पड़ना चाहिये। गाय को दुख देकर हिन्दू गाय का वध करता है, इससे गाय को कौन छुड़ाता है? जो हिन्दू गाय की औलाद को पैना (आर) भौंकता है, उस हिन्दू को कौन समझाता है? इससे हमारे एक राष्ट्र होने में कोई रूकावट नहीं आई है।

अंत में हिन्दू अहिंसक और मुसलमान हिंसक हैं, यह बात अगर सही हो तो अहिंसक का धर्म क्या है? अहिंसक को आदमी की हिंसा करनी चाहिये। ऐसा कहीं लिखा नहीं है। अहिंसक के लिए तो राह सीधी है। उसे एक को बचाने के लिए दूसरे की हिंसा करनी ही नहीं चाहिये। उसे तो मात्र चरण वंदना करनी चाहिये, सिर्फ समझाने का काम करना चाहिये। इसी में उसका पुरुषार्थ है।

लेकिन क्या तमाम हिन्दू अहिंसक हैं? सवाल की जड़ में जाकर विचार करने पर मालूम होता है कि कोई भी अहिंसक नहीं है, क्योंकि जीव को तो हम मारते ही हैं। लेकिन इस हिंसा से हम छूटना चाहते हैं, इसलिए अहिंसक (कहलाते) हैं। साधारण विचार करने से मालूम होता है कि बहुत से हिन्दू मांस खानेवाले हैं, इसलिए वे अहिंसक नहीं माने जा सकते। खींच-तानकर दूसरा अर्थ करना हो तो मुझे कुछ कहना नहीं है। जब ऐसी हालत है तब मुसलमान हिंसक और हिन्दू अहिंसक है, इसलिए दोनों की नहीं बनेगी, यह सोचना बिलकुल गलत है।

ऐसे विचार स्वार्थी धर्मशिक्षकों, शास्त्रियों और मुल्लाओं ने हमें दिये हैं। और इसमें जो कमी रह गई थी, उसे अंग्रेजों ने पूरा किया है। उन्हें इतिहास लिखने की आदत है, हर एक जाति के रीति-रिवाज जानने का वे दंभ करते हैं। ईश्वर ने हमारा मन तो छोटा बनाया है फिर भी वे ईश्वरी दावा करते आये हैं और तरह-तरह के प्रयोग करते हैं। वे अपने बाजे खुद बजाते हैं और हमारे मन में अपनी बात सही होने का विश्वास जमाते हैं। हम भोलेपन में उस सब पर भरोसा कर लेते हैं।

जो टेढ़ा नहीं देखना चाहते वे देख सकेंगे कि कुरान शरीफ में ऐसे सैकड़ों वचन हैं, जो हिन्दुओं को मान्य हों, भगवद्गीता में ऐसी बातें लिखी हैं कि जिनके खिलाफ मुसलमान को कोई भी एतराज नहीं हो सकता। कुरान शरीफ का कुछ भाग मैं न समझ पाऊं या कुछ भाग मुझे पसंद न आये, इस वजह से क्या मैं उसे मानने वाले से नफरत करूं? झगड़ा दो से ही हो सकता। मुझे झगड़ा नहीं करना हो तो मुसलमान क्या करेगा? और मुसलमान को झगड़ा न करना हो तो, मैं क्या कर सकता हूं? हवा में हाथ उठाने वाले का हाथ उखड़ जाता है। सब अपने अपने धर्म का स्वरूप समझकर उससे चिपके रहें और शास्त्रियों व मुल्लाओं को बीच में न आने दें, तो झगड़े का मुंह हमेशा के लिए काला ही रहेगा।

पाठक: अंग्रेज दोनों कौमों का मेल होने देंगे?

संपादक: यह सवाल डरपोक आदमी का है। यह सवाल हमारी हीनता को दिखाता है। अगर दो भाई चाहते हैं कि उनका आपस में मेल बना रहे, तो कौन उनके बीच में आ सकता है? अगर तीसरा आदमी दोनों के बीच झगड़ा पैदा कर सके, तो उन भाइयों को हम कच्चे दिल के कहेंगे। उसी तरह अगर हम हिन्दू और मुसलमान कच्चे दिल के होंगे, तो फिर अंग्रेजों का कसूर निकालना बेकार होगा। कच्चा घड़ा एक कंकड़ से नहीं तो दूसरे कंकड़ से फूटेगा ही।

घड़े को बचाने का रास्ता यह नहीं है कि उसे कंकड़ से दूर रखा जाय बल्कि यह है कि उसे पक्का बनाया जाय, जिससे कंकड़ का भय ही न रहे। उसी तरह हमें पक्के दिल के बनना है। हम दोनों में से कोई एक भी पक्के दिल के होंगे तो तीसरे की कुछ नहीं चलेगी। यह काम हिन्दू आसानी से कर सकते हैं। उनकी संख्या बड़ी है, वे अपने को ज्यादा पढ़े-

लिखे मानते हैं इसलिए वे पक्का दिल रख सकते हैं।

दोनों कौमों के बीच अविश्वास है, इसलिए मुसलमान लार्ड मॉर्ले से कुछ हक मांगते हैं। इसमें हिन्दू क्यों विरोध करें, अगर हिन्दू विरोध न करें, तो अंग्रेज चौकेंगे। मुसलमान धीरे-धीरे हिन्दुओं का भरोसा करने लगेंगे और दोनों का भाई चारा बढ़ेगा। अपने झगड़े अंग्रेजों के पास ले जाने में हमें शरमाना चाहिये। ऐसा करने से हिन्दू कुछ खोनेवाले नहीं हैं, इसका हिसाब आप खुद लगा सकेंगे। जिस आदमी ने दूसरे पर विश्वास किया, उसने आज तक कुछ खोया नहीं है।

मैं यह नहीं कहना चाहता कि हिन्दू-मुसलमान कभी झगड़े ही नहीं। दो भाई साथ रहें, तो उनके बीच तकरार होती है। कभी हमारे सिर भी फूटेंगे, ऐसा होना जरूरी नहीं है, लेकिन सब लोग एक सी अकल के नहीं होते। दोनों जोश में आते हैं तब अक्सर गलत काम कर बैठते हैं। उन्हें हमें सहन करना होगा। लेकिन ऐसी तकरार को भी बड़ी वकालत बघारकर हम अंग्रेजों की अदालत में न ले जायें। दो आदमी लड़ें, लड़ाई में दोनों के सिर या एक का सिर फूटे, तो उसमें तीसरा क्या न्याय करेगा? जो लड़ेंगे वे जखमी भी होंगे। बदन से बदन टकरायेगा तब कुछ निशानी तो रहेगी ही। उसमें न्याय क्या हो सकता है?

11. हिन्दुस्तान की दशा(वकील)

पाठक: आप कहते हैं कि दो आदमी झगड़े तब उसका न्याय भी नहीं कराना चाहिये। यह तो आपने अजीब बात कही।

संपादक: इसे अजीब कहिये या दूसरा कोई विशेषण लगाइये, पर बात सही है। आपकी शंका हमें वकील-डाक्टरों की पहचान कराती है। मेरी राय है कि वकीलों ने हिन्दुस्तान को गुलाम बनाया है। हिन्दू-मुसलमानों के झगड़े बढ़ाये हैं और अंग्रेजी हुकूमत को यहां मजबूत किया है।

पाठक: ऐसे इलजाम लगाना आसान है, लेकिन उन्हें साबित करना मुश्किल होगा। वकीलों के सिवा दूसरा कौन हमें आजादी का मार्ग बताता? उनके सिवा गरीबों का बचाव कौन करता? उनके सिवा कौन हमें न्याय दिलाता? देखिये, स्व. मनमोहन घोष ने कितनों को बचाया? खुद एक कौड़ी भी उन्होंने नहीं ली। कांग्रेस, जिसके आपने ही बखान किये हैं, वकीलों से निभती है और उनकी मेहनत से ही उसमें काम होते हैं। इस वर्ग की आप निंदा करें, यह इन्साफ के साथ गैर इन्साफ करने जैसा है। वह तो आपके हाथ में अखबार आया इसलिए चाहे जो बोलने की छूट लेने जैसा लगता है।

संपादक: जैसा आप मानते हैं वैसा ही मैं भी एक समय मानता था। वकीलों ने कभी कोई अच्छा काम नहीं किया, ऐसा मैं आपसे नहीं कहना चाहता। मि. मनमोहन घोष की मैं इज्जत करता हूं।

उन्होंने गरीबों की मदद की थी यह बात सही है। कांग्रेस में वकीलों ने कुछ काम किया है, यह भी हम मान सकते हैं। वकील भी आखिर मनुष्य हैं और मनुष्य जाति में कुछ तो अच्छाई है ही। वकीलों की भल मानसी के जो बहुत से किस्से देखने में आते हैं, वे तभी हुए जब वे अपने को वकील समझना भूल गये। मुझे तो आपको सिर्फ यही दिखाना है कि उनका धंधा उन्हें अनीति सिखानेवाला है। वे बुरे लालच में फंसे हैं, जिसमें से उबरनेवाले बिरले ही होते हैं।

हिन्दू-मुसलमान आपस में लड़े हैं। तटस्थ आदमी उनसे कहेगा कि आप गयी-बीती को भूल जायें। इसमें दोनों का कसूर रहा होगा। अब दोनों मिलकर रहिये। लेकिन वे वकील के पास जाते हैं। वकील का फर्ज हो जाता है कि वह मुवक्किल की ओर जोर लगाये। मुवक्किल के खयाल में भी न हों ऐसी दलीलें मुवक्किल की ओर से ढुंढ़ना वकील का काम है। अगर वह ऐसा नहीं करता तो माना जायेगा कि वह अपने पेशे को बढ़ा लगाता है। इसलिए वकील तो आम तौर पर झगड़ा आगे बढ़ने की ही सलाह देगा।

लोग दूसरों का दुख दूर करने के लिए नहीं, बल्कि पैसा पैदा करने के लिए वकील बनते हैं। वह एक कमाई का रास्ता है। इसलिए वकील का स्वार्थ झगड़े बढ़ाने में है। यह तो मेरी जानी हुई बात है कि जब झगड़े होते हैं तब वकील खुश होते हैं। मुखतार लोग भी वकील की जात के हैं। जहां झगड़े नहीं होते वहां भी वे झगड़े खड़े करते हैं। उनके दलाल जोंक की तरह गरीब लोगों से चिपकते हैं और उनका खून चूस लेते हैं। वह पेशा ऐसा है कि उसमें आदमियों को झगड़े

के लिए बढ़ावा मिलता ही है। वकील लोग निठल्ले होते हैं।

आलसी लोग ऐश आराम करने के लिए वकील बनते हैं। यह सही बात है। वकालत का पेशा बड़ा आबरूदार पेशा है, ऐसा खोज निकालनेवाले भी वकील ही हैं। कानून वे बनाते हैं, उसकी तारीफ भी वे ही करते हैं। लोगों से क्या दाम लिये जायं, यह भी वे ही तय करते हैं और लोगों पर रोब जमाने के लिए आडंबर ऐसा करते हैं मानो वे आसमान से उतर कर आये हुए देवदूत हों!

वे मजदूर से ज्यादा रोजी क्यों मांगते हैं? उनकी जरूरतें मजदूर से ज्यादा क्यों हैं? उन्होंने मजदूर से ज्यादा देश का क्या भला किया है? क्या भला करनेवाले को ज्यादा पैसा लेने का हक है? और अगर पैसे के खातिर उन्होंने भला किया हो, तो उसे भला कैसे कहा जाय? यह तो उस पेशे का जो गुण है वह मैंने बताया।

वकीलों के कारण हिन्दू-मुसलमानों के बीच कुछ दंगे हुए हैं, यह तो जिन्हें अनुभव है वे जानते होंगे। उनसे कुछ खानदान बरबाद हो गये हैं। उनकी बदौलत भाइयों में जहर दाखिल हो गया है। कुछ रियासतें वकीलों के जाल में फँसकर कर्जदार हो गयी हैं। बहुत से गरासिये इन वकीलों की कारस्तानी से लूट गये हैं। ऐसी बहुत सी मिसालें दी जा सकती हैं।

लेकिन वकीलों से बड़े से बड़ा नुकसान तो यह हुआ है कि अंग्रेजों का जुआ हमारी गर्दन पर मजबूत जम गया है। आप सोचिये। क्या आप मानते हैं कि अंग्रेजी अदालतें यहां न होती तो वे हमारे देश में राज कर सकते थे? ये अदालतें लोगों के भले के लिए नहीं हैं। जिन्हें अपनी सत्ता कायम रखनी है वे अदालतों के जरिये लोगों को बस में रखते हैं। लोग अगर खुद अपने झगड़े निबटा लें तो तीसरा आदमी उन पर अपनी सत्ता नहीं जमा सकता।

सचमुच जब लोग खुद मार-पीट करके या रिश्तेदारों को पंच बनाकर अपना झगड़ा निबटा लेते थे तब वे बहादुर थे। अदालतें आयी और वे कायर बन गये। लोग आपस में लड़ कर झगड़े मिटायें, यह जंगली माना जाता है। अब तीसरा आदमी झगड़ा मिटाता है, यह क्या कम जंगलीपन है? क्या कोई ऐसा कह सकेगा कि तीसरा आदमी जो फैसला देता है वह सही फैसला ही होता है? कौन सच्चा है, यह दोनों पक्ष के लोग जानते हैं। हम भोलेपन में मान लेते हैं कि तीसरा आदमी हमसे पैसे लेकर हमारा इन्साफ करता है।

इस बात को अलग रखें। हकीकत तो यही दिखानी है कि अंग्रेजों ने अदालतों के जरिये हम पर अंकुश जमाया है और अगर हम वकील न बनें तो ये अदालतें चल ही नहीं सकतीं। अगर अंग्रेज ही जज होते, अंग्रेज ही वकील होते और अंग्रेज ही सिपाही होते, तो वे सिर्फ अंग्रेजों पर ही राज करते। हिन्दुस्तानी जज और हिन्दुस्तानी वकील के बगैर उनका काम चल नहीं सका। वकील कैसे पैदा हुए, उन्होंने कैसी धांधली मचाई, यह सब अगर आप समझ सकें, तो मेरे जितनी ही नफरत आपको भी इस पेशे के लिए होगी।

अंग्रेजी सत्ता की एक मुख्य कुंजी उनकी अदालतें हैं और अदालतों की कुंजी वकील हैं। अगर वकील वकालत करना छोड़ दें और वह पेशा वेश्या के पेशे जैसा नीच माना जाय तो अंग्रेजी राज एक दिन में टूट जाय। वकीलों ने हिन्दुस्तानी प्रजा पर यह तोहमत लगवाई है कि हमें झगड़े प्यारे हैं और हम कोर्ट कचहरी रूपी पानी की मछलिया हैं।

जो शब्द मैं वकीलों के लिए इस्तेमाल करता हूं, वे ही शब्द जजों को भी लागू होते हैं। ये दोनों मौसरे भाई हैं और एक दूसरे को बल देनेवाले हैं।

12. हिन्दुस्तान की दशा (डाक्टर)

पाठक: वकीलों की बात तो हम समझ सकते हैं। उन्होंने जो अच्छा काम किया है वह जान-बूझकर नहीं किया, ऐसा यकीन होता है। बाकी उनके धंधे को देखा जाय तो वह कनिष्ठ ही है। लेकिन आप तो डाक्टरों को भी उनके साथ घसीटते हैं, यह कैसे?

संपादक: मैं जो विचार आपके सामने रखता हूं वे इस समय तो मेरे अपने ही हैं। लेकिन ऐसे विचार मैंने ही किये सो बात नहीं। पश्चिम के सुधारक खुद मुझसे ज्यादा सख्त शब्दों में इन धंधों के बारे में लिख गये हैं। उन्होंने वकीलों और

डाक्टरों की बहुत निन्दा की है। उनमें से एक लेखक ने एक जहरी पेड़ों का चित्र खींचा है, वकील-डाक्टर वगैरा निकम्मे धंधेवालों को उसकी शाखाओं के रूप में बताया है और उस पेड़ के तने पर नीति-धर्म की कुल्हाड़ी उठाई है।

अनीति को इन सब धंधों की जड़ बताया है। इससे आप यह समझ लेंगे कि मैं आपके सामने अपने दिमाग से निकाले हुए नये विचार नहीं रखता, लेकिन दूसरों का और अपना अनुभव आपके सामने रखता हूँ। डाक्टरों के बारे में जैसे आपको अभी मोह है, वैसे कभी मुझे भी था। एक समय ऐसा था, जब मैंने खुद डाक्टर होने का इरादा किया था और सोचा था कि डाक्टर बनकर कौम की सेवा करूँगा। मेरा यह मोह अब मिट गया है। हमारे समाज में वैद्य का धंधा कभी अच्छा माना ही नहीं गया। इसका भान अब मुझे हुआ है और उस विचार की कीमत मैं समझ सकता हूँ।

अंग्रेजों ने डाक्टरी विद्या से भी हम पर काबू जमाया है। डाक्टरों में दंभ की भी कमी नहीं है। मुगल बादशाह को भरमाने वाला एक अंग्रेज डाक्टर ही था। उसने बादशाह के घर में कुछ बीमारी मिटाई, इसलिए उसे सिरोपाव मिला। अमीरों के पास पहुंचनेवाले भी डॉक्टर ही हैं।

डॉक्टरों ने हमें जड़ हिला दिया। डॉक्टरों से नीम-हकीम ज्यादा अच्छे, ऐसा कहने का मेरा मन होता है। इस पर हम कुछ विचार करें।

डाक्टरों का काम सिर्फ शरीर को संभालने का है या शरीर को संभालने का भी नहीं है। उनका काम शरीर में जो रोग पैदा होते हैं, उन्हें दूर करने का है। रोग क्यों होते हैं? हमारी ही गफलत से। मैं बहुत खाऊँ और मुझे बदहजमी, अजीर्ण हो जाय, फिर मैं डाक्टर के पास जाऊँ और वह मुझे गोली दे, गोली खाकर मैं चंगा हो जाऊँ और दुबारा खूब खाऊँ और फिर से गोली लूँ। अगर मैं गोली न लेता तो अजीर्ण की सजा भुगतता और फिर से बेहद नहीं खाता। डाक्टर बीच में आया और उसने हृदय से ज्यादा खाने में मेरी मदद की। उससे मेरे शरीर को तो आराम हुआ लेकिन मेरा मन कमजोर बना। इस तरह आखिर मेरी यह हालत होगी कि मैं अपने मन पर जरा भी काबू न रख सकूँगा।

मैंने विलास किया, मैं बीमार पड़ा डाक्टर ने मुझे दवा दी और मैं चंगा हुआ। क्या मैं फिर से विलास नहीं करूँगा? जरूर करूँगा। अगर डाक्टर बीच में न आता तो कुदरत अपना काम करती। मेरा मन मजबूत बनता और अन्त में निर्विषयी होकर मैं सुखी होता।

अस्पतालें पाप की जड़ हैं। उनकी बदौलत लोग शरीर का जतन कम करते हैं और अनीति को बढ़ाते हैं।

यूरोप के डाक्टर तो हृदय करते हैं। वे सिर्फ शरीर के ही गलत जतन के लिए लाखों जीवों को हर साल मारते हैं, जिंदा जीवों पर प्रयोग करते हैं। ऐसा करना किसी भी धर्म को मंजूर नहीं। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, जरथोस्ती सब धर्म कहते हैं कि आदमी के शरीर के लिए इतने जीवों को मारने की जरूरत नहीं।

डाक्टर हमें धर्म भ्रष्ट करते हैं। उनकी बहुत सी दवाओं में चरबी या दारू होती है। इन दोनों में से एक भी चीज हिन्दू मुसलमान को चल सके, ऐसी नहीं है। हम सभ्य होने का ढोंग करके दूसरों को वहमी मानकर और बेलगाम होकर चाहें जो करते रहें। यह दूसरी बात है। लेकिन डाक्टर हमें धर्म से भ्रष्ट करते हैं। यह साफ और सीधी बात है।

इसका परिणाम यह आता है कि हम निसत्त्व और नामर्द बनते हैं। ऐसी दशा में हम लोकसेवा करने लायक नहीं रहते और शरीर से क्षीण और बुद्धिहीन होते जा रहे हैं। अंग्रेजी या यूरोपियन डाक्टरी सीखना गुलामी की गाँठ को मजबूत बनाने जैसा है।

हम डाक्टर क्यों बनते हैं, यह भी सोचने की बात है। उसका सच्चा कारण तो आबरूदार और पैसा कमाने का धंधा करने की इच्छा है। उसमें परोपकार की बात नहीं है। उस धन्धे में परोपकार नहीं है, यह तो मैं बता चुका। उससे लोगों को नुकसान होता है। डाक्टर सिर्फ आडम्बर दिखाकर ही लोगों से बड़ी फीस वसूल करते हैं और अपनी एक पैसे की दवा के कई रुपये लेते हैं। यों विश्वास में और चंगे हो जाने की आशा में लोग डाक्टरों से ठगे जाते हैं। जब ऐसा ही है तब भलाई का दिखावा करनेवाले डाक्टरों से खुले ठग वैद्य (नीम हकीम) ज्यादा अच्छे।

13. सच्ची सभ्यता कौन सी?

पाठक: आपने रेल को रद्द कर दिया? वकीलों की निन्दा की, डाक्टरों को दबा दिया! तमाम कल-काम को भी आप नुकसानदेह मानेंगे, ऐसा मैं देख सकता हूँ। तब सभ्यता कहें, तो किसे कहें?

संपादक: इस सवाल का जबाब मुश्किल नहीं है। मैं मानता हूँ कि जो सभ्यता हिन्दुस्तान ने दिखायी है उसको दुनिया में कोई नहीं पहुँच सकता। जो बीज हमारे पुरखों ने बोये हैं उनकी बराबरी कर सके, ऐसी कोई चीज देखने में नहीं आयी। रोम मिट्टी में मिल गया। ग्रीस का सिर्फ नाम ही रह गया। मिस्र की बादशाहत ही चली गई। जापान पश्चिम के शिकंजे में फँस गया और चीन का कुछ भी कहा नहीं जा सकता। लेकिन गिरा टूटा जैसा भी हो। हिन्दुस्तान आज भी अपनी बुनियाद में मजबूत है।

जो रोम और ग्रीस गिर चुके हैं, उनकी किताबों से यूरोप के लोग सीखते हैं। उनकी गलतियाँ वे नहीं करेंगे। ऐसा गुमान रखते हैं। ऐसी उनकी कंगाल हालत है जब कि हिन्दुस्तान अचल है, अडिग है। यही उसका भूषण है। हिन्दुस्तान पर आरोप लगाया जाता है कि वह ऐसा जंगली, ऐसा अज्ञान है कि उससे जीवन में कुछ फेरबदल कराये ही नहीं जा सकते। यह आरोप हमारा गुण है, दोष नहीं। अनुभव से जो हमें ठीक लगा है, उसे हम क्यों बदलेंगे? बहुत से अकल देनेवाले आते जाते रहते हैं पर हिन्दुस्तान अडिग रहता है। यह उसकी खूबी है, यह उसका लंगर है।

सभ्यता वह आचरण है जिससे आदमी अपना फर्ज अदा करता है। फर्ज अदा करने के मानी है नीति का पालन करना। नीति के पालन का मतलब है अपने मन और इन्द्रियों को बस में रखना। ऐसा करते हुए हम अपने को (अपनी असलियत को) पहचानते हैं। यही सभ्यता है। इससे जो उल्टा है वह बिगाड़ करनेवाला है।

बहुत से अंग्रेज लेखक लिख गये हैं कि ऊपर की व्याख्या के मुताबिक हिन्दुस्तान को कुछ भी सीखना बाकी नहीं रहता, यह बात ठीक है। हमने देखा कि मुनष्य की वृत्तियाँ चंचल हैं। उसका मन बेकार की दौड़ धूप किया करता है। उसका शरीर जैसे जैसे ज्यादा दिया जाय, वैसे वैसे ज्यादा मांगता है। ज्यादा लेकर भी वह सुखी नहीं होता। भोग भोगने से भोग की इच्छा बढ़ती जाती है। इसलिए हमारे पुरखों ने भोग की हद बांध दी। बहुत सोचकर उन्होंने देखा कि सुख-दुख तो मन के कारण हैं। अमीर अपनी अमीरी की वजह से सुखी नहीं है। गरीब अपनी गरीबी के कारण दुखी नहीं है। अमीर दुखी देखने में आता है और गरीब सुखी देखने में आता है। करोड़ों लोग तो गरीब ही रहेंगे। ऐसा देखकर उन्होंने भोग की वासना छुड़ाई।

हजारों साल पहले जो हल काम में लिया जाता था उससे हमने काम चलाया। हजारों साल पहले जैसे झोंपड़े थे, उन्हें हमने कायम रखा। हजारों साल पहले जैसी हमारी शिक्षा थी वही चलती आई। हमने नाशकारक होड़ को समाज में जगह नहीं दी, सब अपना अपना धंधा करते रहे। उसमें उन्होंने दस्तूर के मुताबिक दाम लिये। ऐसा नहीं था कि हमें यंत्र वगैरा की खोज करना ही नहीं आता था। लेकिन हमारे पूर्वजों ने देखा कि लोग अगर यंत्र वगैरा की झंझट में पड़ेंगे, तो गुलाम ही बनेंगे और अपनी नीति को छोड़ देंगे। उन्होंने सोच-समझकर कहा कि हमें अपने हाथ पैरों से जो काम हो सके वही करना चाहिये। हाथ पैरों का इस्तेमाल करने में ही सच्चा सुख है, उसी में तन्दुरुस्ती है।

उन्होंने सोचा कि बड़े शहर खड़े करना बेकार की झंझट है। उनमें लोग सुखी नहीं होंगे। उनमें धूर्तों की टोलियाँ और वेश्याओं की गलियाँ पैदा होंगी। गरीब अमीरों से लूटे जायेंगे। इसलिए उन्होंने छोटे देहातों से संतोष माना।

उन्होंने देखा कि राजाओं और उनकी तलवार के बनिस्बत नीति का बल ज्यादा बलवान है। इसलिए उन्होंने राजाओं को नीतिवान पुरुषों, ऋषियों और फकीरों से कम दर्जों का माना। ऐसी जिस राष्ट्र की गठन है वह राष्ट्र दूसरों को सिखाने लायक है। वह दूसरों से सीखने लायक नहीं है।

इस राष्ट्र में अदालतें थीं, वकील थे, डाक्टर-वैद्य थे। लेकिन वे सब ठीक ढंग से नियम के मुताबिक चलते थे। सब जानते थे कि ये धन्धे बड़े नहीं हैं और वकील डाक्टर वगैरा लोगों में लूट नहीं चलाते थे। वे तो लोगों के अश्रित थे। वे लोगों के मालिक बनकर नहीं रहते थे। इन्साफ काफी अच्छा होता था। अदालतों में न जाना यह लोगों का ध्येय था। उन्हें भरमाने वाले स्वार्थी लोग नहीं थे। इतनी सड़न भी सिर्फ राजा और राजधानी के आसपास ही थी। यों आम प्रजा

तो उससे स्वतंत्र रहकर अपने खेत का मालिकी हक भोगती थी। उसके पास सच्चा स्वराज्य था और जहां यह चांडाल सभ्यता नहीं पहुंची है, वहां हिन्दुस्तान आज भी वैसा ही है।

उसके सामने आप अपने नये ढोंगों की बात करेंगे तो वह आपकी हंसी उड़ायेगा। उस पर न तो अंग्रेज राज करते हैं, न आप कर सकेंगे। जिन लोगों के नाम पर हम बात करते हैं, उन्हें हम पहचानते नहीं हैं, न वे हमें पहचानते हैं। आपको और दूसरों को, जिनमें देश प्रेम है, मेरी सलाह है कि आप देश में, जहां रेल की बाढ़ नहीं फैली है, उस भाग में छह माह के लिए घूम आएं और बाद में देश की लगन लगायें। बाद में स्वराज्य की बात करें। अब आपने देखा कि सच्ची सभ्यता में किस चीज को कहता हूं। ऊपर मैंने जो तस्वीर खींची है वैसा हिन्दुस्तान जहां हो, वहां जो आदमी फेरफार करेगा उसे आप दुश्मन समझिये। वह मनुष्य पापी है।

पाठक: आपने जैसा बताया वैसा ही हिन्दुस्तान होता, तब तो ठीक था। लेकिन जिस देश में हजारों बाल विधवायें हैं, जिस देश में दो बरस की बच्ची की शादी हो जाती है, जिस देश में बारह साल की उम्र के लड़के लड़किया घर संसार चलाते हैं, जिस देश में स्त्री एक से ज्यादा पति करती है, जिस देश में नियोग की प्रथा है, जिस देश में धर्म के नाम पर कुमारिकाएं बेसवाएं बनती हैं, जिस देश में धर्म के नाम पर पाड़ों और बकरो की हत्या होती है, वह देश भी हिन्दुस्तान ही है। ऐसा होने पर भी आपने जो बताया वह क्या सभ्यता का लक्षण है?

संपादक: आप भूलते हैं। आपने जो दोष बताये वे तो सचमुच दोष ही हैं। उन्हें कोई सभ्यता नहीं कहता। वे दोष सभ्यता के बावजूद कायम रहे हैं। उन्हें दूर करने के प्रयत्न हमेशा हुए हैं और होते ही रहेंगे। हममें जो नया जोश पैदा हुआ है, उसका उपयोग हम इन दोषों को दूर करने में कर सकते हैं।

मैंने आपको आज की सभ्यता की जो निशानी बताई उसे इस सभ्यता के हिमायती खुद बताते हैं। मैंने हिन्दुस्तान की सभ्यता का जो वर्णन किया, वह वर्णन नई सभ्यता के हिमायतियों ने किया है।

किसी भी देश में किसी भी सभ्यता के मातहत सभी लोग संपूर्णता तक नहीं पहुंच पाये हैं। हिन्दुस्तान की सभ्यता का झुकाव नीति को मजबूत करने की ओर है। पश्चिम की सभ्यता का झुकाव अनीति को मजबूत करने की ओर है, इसलिए मैंने उसे हानिकारक कहा है। पश्चिम की सभ्यता निरीश्वरवादी है, हिन्दुस्तान की सभ्यता ईश्वर में माननेवाली है।

यों समझकर ऐसी श्रद्धा रखकर हिन्दुस्तान के हितचिंतकों को चाहिये कि वे हिन्दुस्तान की सभ्यता से बच्चा जैसे मां से चिपटा रहता है, वैसे चिपटे रहें।

14. हिन्दुस्तान कैसे आजाद हो?

पाठक: सभ्यता के बारे में आपके विचार मैं समझ गया। आपने जो कहा उस पर मुझे ध्यान देना होगा। तुरन्त सब कुछ मंजूर कर लिया जाय, ऐसा तो आप नहीं मानते होंगे, ऐसी आशा भी नहीं रखते होंगे। आपके ऐसे विचारों के अनुसार आप हिन्दुस्तान के आजाद होने का क्या उपाय बतायेंगे?

संपादक: मेरे विचार सब लोग तुरन्त मान लें, ऐसी आशा मैं नहीं रखता। मेरा फर्ज इतना ही है कि आपके जैसे जो लोग मेरे विचार जानना चाहते हैं, उनके सामने अपने विचार रख दूं। वे विचार उन्हें पसंद आयेंगे या नहीं आयेंगे। यह तो समय बीतने पर ही मालूम होगा। हिन्दुस्तान की आजादी के उपायों का हम विचार कर चुके। फिर भी हमने दूसरे रूप में इन पर विचार किया। अब हम उन पर उनके स्वरूप में विचार करें। जिस कारण से रोगी बीमार हुआ हो, वह कारण अगर दूर कर दिया जाय, तो रोगी अच्छा हो जायगा, यह जग मशहूर बात है। इसी तरह जिस कारण से हिन्दुस्तान गुलाम बना वह कारण अगर दूर कर दिया जाय, तो वह बंधन से मुक्त हो जायेगा।

पाठक: आपकी मान्यता के मुताबिक हिन्दुस्तान की सभ्यता अगर सबसे अच्छी है, तो फिर वह गुलाम क्यों बना?

संपादक: सभ्यता तो मैंने कही वैसी ही है। लेकिन देखने में आया है कि हर सभ्यता पर आफतें आती हैं। जो सभ्यता अचल है वह आखिरकार आफतों को दूर कर देती है। हिन्दुस्तान के बालकों में कोई न कोई कमी भी थी इसीलिए वह

सभ्यता आफतों से घिर गयी। लेकिन इस घेरे में से छूटने की ताकत उसमें है, यह उसके गौरव को दिखाता है।

और फिर सारा हिन्दुस्तान उसमें (गुलामी में) घिरा हुआ नहीं है। जिन्होंने पश्चिम की शिक्षा पाई है और जो उसके पाश में फंस गये हैं, वे ही गुलामी में घिरे हुए हैं। हम जगत को अपनी दमड़ी के नाप से नापते हैं। अगर हम गुलाम हैं, तो जगत को भी गुलाम मान लेते हैं। हम कंगाल दशा में हैं, इसलिए मान लेते हैं कि सारा हिन्दुस्तान ऐसी दशा में है। दरअसल ऐसा कुछ नहीं है। फिर भी हमारी गुलामी सारे देश की गुलामी है, ऐसा मानना ठीक है। लेकिन ऊपर की बात हम ध्यान में रखें तो समझ सकेंगे कि हमारी अपनी गुलामी मिट जाये तो हिन्दुस्तान की गुलामी मिट गई। ऐसा मान लेना चाहिये, इसमें अब आपको स्वराज्य की व्याख्या भी मिल जाती है। हम अपने ऊपर राज करें, वही स्वराज्य है, और वह स्वराज्य हमारी हथेली में है।

इस स्वराज्य को आप सपने जैसा न मानें। मन से मानकर बैठे रहने का भी, यह स्वराज्य नहीं है। यह तो ऐसा स्वराज्य है कि आपने अगर इसका स्वाद चख लिया है, तो दूसरों को इसका स्वाद चखाने के लिए आप जिन्दगी भर कोशिश करेंगे, लेकिन मुख्य बात तो हर शख्स के स्वराज्य भोगने की है। डूबता आदमी दूसरे को नहीं तारेगा लेकिन तैरता आदमी दूसरे को तारेगा। हम खुद गुलाम होंगे और दूसरों को आजाद करने की बात करेंगे तो वह संभव नहीं है।

लेकिन इतना काफी नहीं है। हमें और भी आगे सोचना होगा। अब इतना तो आपकी समझ में आया होगा कि अंग्रेजों को देश से निकालने का मकसद सामने रखने की जरूरत नहीं है। अगर अंग्रेज हिन्दुस्तानी बनकर रहें तो हम उनका समावेश यहां कर सकते हैं। अंग्रेज अगर अपनी सभ्यता के साथ रहना चाहें, तो उनके लिए हिन्दुस्तान में जगह नहीं है। ऐसे हालात पैदा करना हमारे हाथ में है।

पाठक: अंग्रेज हिन्दुस्तानी बनें यह नामुमकिन है।

संपादक: हमारा ऐसा कहना यह कहने के बराबर है कि अंग्रेज मनुष्य नहीं हैं। वे हमारे जैसे बनें या न बनें इसकी हमें परवाह नहीं है। हम अपना घर साफ करें। फिर रहने लायक लोग ही उसमें रहेंगे, दूसरे अपने आप चले जायेंगे ऐसा अनुभव तो हर आदमी को हुआ होगा।

पाठक: ऐसा होने की बात तारीख में तो हमने नहीं पढ़ी।

संपादक: जो चीज तारीख में नहीं देखी वह कभी नहीं होगी। ऐसा मानना मनुष्य की प्रतिष्ठा में अविश्वास करना है। जो बात हमारी अकल में आ सके उसे आखिर हमें आजमाना तो चाहिये ही।

हर देश की हालत एक सी नहीं होती। हिन्दुस्तान की हालत विचित्र है। हिन्दुस्तान का बल असाधारण है। इसलिए दूसरी तारीखों से हमारा कम संबंध है। मैंने आपको बताया कि दूसरी सभ्यतायें मिट्टी में मिल गयीं, जब कि हिन्दुस्तानी सभ्यता को आंच नहीं आयी है।

पाठक: मुझे ये सब बातें ठीक नहीं लगतीं। हमें लड़कर अंग्रेजों को निकालना ही होगा। इसमें कोई शक नहीं जब तक वे हमारे मुल्क में हैं तब तक हमें चैन नहीं पड़ सकता। 'पराधीन सपनेहु सुख नाहीं' ऐसा देखने में आता है। अंग्रेज यहा हैं इसलिए हम कमजोर होते जा रहे हैं। हमारा तेज चला गया है और हमारे लोग घबराये से दीखते हैं। अंग्रेज हमारे देश के लिए यम (काल) जैसे हैं। उस यम को हमें किसी भी प्रयत्न से भगाना होगा।

संपादक: आप अपने आवेश में मेरा सारा कहना भूल गये हैं। अंग्रेजों को यहां लाने वाले हम हैं और वे हमारी बदौलत ही यहां रहते हैं। आप यह कैसे भूल जाते हैं कि हमने उनकी सभ्यता अपनायी है, इसलिए वे यहां रह सकते हैं? आप उनसे जो नफरत करते हैं, वह नफरत आपको उनकी सभ्यता से करनी चाहिये। फिर भी मान लें कि हम लड़कर उन्हें निकालना चाहते हैं। यह कैसे हो सकेगा?

पाठक: इटली ने किया वैसे। मैजिनी और गैरीबाल्डी ने जो किया, वह तो हम भी कर सकते हैं। वे महावीर थे, इस बात से क्या आप इनकार कर सकेंगे?

15. इटली और हिन्दुस्तान

संपादक: आपने इटली का उदाहरण ठीक दिया। मैजिनी महात्मा था। गैरीबाल्डी बड़ा योद्धा था। दोनों पूजनीय थे। उनसे हम बहुत सीख सकते हैं। फिर भी इटली की दशा और हिन्दुस्तान की दशा में फरक है। पहले तो मैजिनी और गैरीबाल्डी के बीच का भेद जानने लायक हैं।

मैजिनी के अरमान अलग थे। मैजिनी जैसा सोचता था वैसा इटली में नहीं हुआ। मैजिनी ने मनुष्य जाति के कर्तव्य के बारे में लिखते हुए यह बताया है कि हर एक को स्वराज्य भोगना सीख लेना चाहिये। यह बात उसके लिए सपने जैसी रही। गैरीबाल्डी और मैजिनी के बीच मतभेद हो गया था। यह हमें याद रखना चाहिये। इसके सिवा गैरीबाल्डी ने हर इटालियन के हाथ में हथियार दिये और हर इटालियन ने हथियार लिये।

इटली और आस्ट्रिया के बीच सभ्यता का भेद नहीं था। वे तो चचेरे भाई माने जायेंगे। जैसे को तैसा वाली बात इटली की थी। इटली को परदेशी आस्ट्रिया के जूए से छुड़ाने का मोह गैरीबाल्डी को था। इसके लिए उसने काबूर के मारफत जो साजिशें कीं, वे उसकी शूरता को बढ़ा लगानेवाली हैं।

और अन्त में नतीजा क्या निकला? इटली में इटालियन राज करते हैं इसलिए इटली की प्रजा सुखी है, ऐसा आप मानते हों तो मैं आप से कहूंगा कि आप अंधेरे में भटकते हैं। मैजिनी ने साफ बताया है कि इटली आजाद नहीं हुआ है। विक्टर इमेन्युअल ने इटली का एक अर्थ किया, मैजिनी दूसरा। इमेन्युअल, काबूर और गैरीबाल्डी के विचार से इटली का अर्थ था इमेन्युअल या इटली का राजा और उसके हजूर। मैजिनी के विचार से इटली का अर्थ था इटली के लोग-उसके किसान। इमेन्युअल वगैरा तो उनके (प्रजा के) नौकर थे।

मैजिनी का इटली अब भी गुलाम है। दो राजाओं के बीच शतरंज की बाजी लगी थी, इटली की प्रजा तो सिर्फ प्यादा थी और है। इटली के मजदूर अब भी दुखी हैं। इटली के मजदूरों की दाद-फरियाद नहीं सुनी जाती, इसलिए वे लोग खून करते हैं, विरोध करते हैं, फिर फोड़ते हैं और वहां बलवा होने का डर आज भी बना हुआ है। आस्ट्रिया के जाने से इटली को क्या लाभ हुआ? नाम का ही लाभ हुआ। जिन सुधारों के लिए जंग मचा वे सुधार हुए नहीं, प्रजा की हालत सुधरी नहीं।

हिन्दुस्तान की ऐसी दशा करने का तो आपका इरादा नहीं ही होगा। मैं मानता हूं कि आपका विचार हिन्दुस्तान के करोड़ों लोगों को सुखी करने का होगा, यह नहीं कि आप या मैं राजसत्ता ले लूं। अगर ऐसा है तो हमें एक ही विचार करना चाहिये। वह यह कि प्रजा स्वतन्त्र कैसे हो?

आप कबूल करेंगे कि कुछ देशी रियासतों में प्रजा कुचली जाती है। वहां के शासक नीचता से लोगों को कुचलते हैं। उनका जुल्म अंग्रेजों के जुल्म से भी ज्यादा है। ऐसा जुल्म अगर आप हिन्दुस्तान में चाहते हों, तो हमारी पटरी कभी नहीं बैठेगी। मेरा स्वदेशाभिमान मुझे यह नहीं सिखाता कि देशी राजाओं के मातहत जिस तरह प्रजा कुचली जाती है उसी तरह कुचलने दिया जाय। मुझमें बल होगा तो मैं देशी राजाओं के जुल्म के खिलाफ और अंग्रेजी जुल्म के खिलाफ जूझूंगा।

स्वदेशाभिमान का अर्थ मैं देश का हित समझता हूं। अगर देश का हित अंग्रेजों के हाथों होता हो, तो मैं आज अंग्रेजों को झुककर नमस्कार करूंगा। अगर कोई अंग्रेज कहे कि देश को आजाद करना चाहिये, जुल्म के खिलाफ खड़े होना चाहिये और लोगों की सेवा करनी चाहिये, उस अंग्रेज को मैं हिन्दुस्तानी मानकर उसका स्वागत करूंगा।

फिर, इटली की तरह जब हिन्दुस्तान को हथियार मिलें, तभी वह लड़ सकता है पर इस भगीरथ (बहुत बड़े) काम का तो मालूम होता है आपने विचार ही नहीं किया है। अंग्रेज गोला बारूद से पूरी तरह लैस हैं इससे मुझे डर नहीं लगता। लेकिन ऐसा तो दीखता है कि उनके हथियारों से उन्हीं के खिलाफ लड़ना हो, तो हिन्दुस्तान को हथियारबन्द करना होगा। अगर ऐसा हो सकता हो, तो इसमें कितने साल लगेंगे? और तमाम हिन्दुस्तानियों को हथियारबन्द करना तो हिन्दुस्तान को यूरोप-सा बनाने जैसा होगा।

अगर ऐसा हुआ तो आज यूरोप के जो बेहाल हैं वैसे ही हिन्दुस्तान के भी होंगे। थोड़े में, हिन्दुस्तान को यूरोप की

सभ्यता अपनाती होगी। ऐसा ही होनेवाला हो तो अच्छी बात यह होगी कि जो अंग्रेज उस सभ्यता में कुशल हैं, उन्हीं को हम यहां रहने दें। उनसे थोड़ा बहुत झगड़ कर कुछ हक हम पायेंगे कुछ नहीं पायेंगे और अपने दिन गुजारेंगे।

लेकिन बात तो यह है कि हिन्दुस्तान की प्रजा कभी हथियार नहीं उठयेगी। न उठाये यह ठीक ही है।

पाठक: आप तो बहुत आगे बढ़ गये। सबके हथियारबंद होने की जरूरत नहीं। हम पहले तो कुछ अंग्रेजों का खून करके आतंक फैलायेंगे। फिर जो थोड़े लोग हथियारबंद होंगे, वे खुल्लमखुल्ला लड़ेंगे। उसमें पहले तो बीस पचीस लाख हिन्दुस्तानी जरूर मरेंगे। लेकिन आखिर हम देश को अंग्रेजों से जीत लेंगे। हम गुरीला (डाकुओं जैसी) लड़ाई लड़कर अंग्रेजों को हरा देंगे।

संपादक: आपका खयाल हिन्दुस्तान की पवित्र भूमि को राक्षसी बनाने का लगता है। अंग्रेजों का खून करके हिन्दुस्तान को छुड़ायेंगे, ऐसा विचार करते हुए आपको त्रास क्यों नहीं होता? खून तो हमें अपना करना चाहिये क्योंकि हम नामर्द बन गये हैं, इसीलिए हम खून का विचार करते हैं। ऐसा करके आप किसे आजाद करेंगे? हिन्दुस्तान की प्रजा ऐसा कभी नहीं चाहती। हम जैसे लोग ही जिन्होंने अधम सभ्यतारूपी भांग पी है, नशे में ऐसा विचार करते हैं। खून करके जो लोग राज करेंगे, वे प्रजा को सुखी नहीं बना सकेंगे।

धींगरा ने जो खून किया है उससे या जो खून हिन्दुस्तान में हुए हैं उनसे देश को फायदा हुआ है, ऐसा अगर कोई मानता हो तो वह बड़ी भूल करता है। धींगरा को मैं देशाभिमानी मानता हूं, लेकिन उसका देश प्रेम पागलपन से भरा था। उसने अपने शरीर का बलिदान गलत तरीके से दिया। उससे अंत में तो देश को नुकसान ही होनेवाला है।

पाठक: लेकिन आपको इतना तो कबूल करना होगा कि अंग्रेज इस खून से डर गये हैं, और लार्ड मॉले, ने जो कुछ हमें दिया है वह ऐसे डर से ही दिया है।

संपादक: अंग्रेज जैसे डरपोक प्रजा है वैसे बहादुर भी है। गोला-बारूद का असर उन पर तुरन्त होता है, ऐसा मैं मानता हूं। संभव है, लार्ड मॉले ने हमें जो कुछ दिया वह डर से दिया हो लेकिन डर से मिली हुई चीज जब तक डर बना रहता है तभी तक टिक सकती है।

16. गोला-बारूद

पाठक: डर से दिया हुआ जब तक डर रहे तभी तक टिक सकता है, यह तो आपने विचित्र बात कही। जो दिया सो दिया। उसमें फिर क्या हेरफेर हो सकता है?

संपादक: ऐसा नहीं है। 1857 की घोषणा बलवे के अंत में लोगों में शान्ति कायम रखने के लिए की गई थी। जब शान्ति हो गई और लोग भोले दिल के बन गये, तब उसका अर्थ बदल गया। अगर मैं सजा के डर से चोरी न करूं तो सजा का डर मिट जाने पर चोरी करने की मेरी फिर से इच्छा होगी और मैं चोरी करूंगा। यह तो बहुत ही साधारण अनुभव है। इससे इनकार नहीं किया जा सकता। हमने मान लिया है कि डांट डपटकर लोगों से काम लिया जा सकता है और इसलिए हम ऐसा करते आये हैं।

पाठक: आपकी यह बात आपके खिलाफ जाती है, ऐसा आपको नहीं लगता। आपको स्वीकार करना होगा कि अंग्रेजों ने खुद जो कुछ हासिल किया है वह मार काट करके ही हासिल किया है। आप कह चुके हैं कि (मार-काट से) उन्होंने जो कुछ हासिल किया है वह बेकार है, यह मुझे याद है। इससे मेरी दलील को धक्का नहीं पहुंचता। उन्होंने बेकार (चीज) पाने का सोचा और उसे पाया। मतलब यह कि उन्होंने अपनी मुराद पूरी की। साधन क्या था इसकी चिन्ता हम क्यों करें। अगर हमारी मुराद अच्छी हो तो क्या उसे हम चाहे जिस साधन से मार काट करके भी पूरा नहीं करेंगे।

चोर मेरे घर में घुसे तब क्या मैं साधन का विचार करूंगा? मेरा धर्म तो उसे किसी भी तरह बाहर निकालने का ही होगा। ऐसा लगता है कि आप यह तो कबूल करते हैं कि हमें सरकार के पास अरजियां भेजने से कुछ नहीं मिला है और न आगे कभी मिलने वाला है। तो फिर उन्हें मारकर हम क्यों न लें। जरूरत हो उतनी मार का डर हम हमेशा बनाये रखेंगे। बच्चा अगर आग में पैर रखे और उसे आग से बचाने के लिए हम उस पर रोक लगायें तो आप भी इसे

दोष नहीं मानेंगे किसी भी तरह हमें अपना काम पूरा कर लेना है।

संपादक: आपने दलील तो अच्छी की। वह ऐसी है कि बहुतों ने उससे धोखा खाया है। मैं भी ऐसी ही दलील करता था। लेकिन अब मेरी आंखें खुल गई हैं और मैं अपनी गलती समझ सकता हूँ। आपको वह गलती बताने की कोशिश करूंगा। पहले तो इस दलील पर विचार करें कि अंग्रेजों ने जो कुछ पाया वह मार काट करके पाया। इसलिए हम भी वैसा ही करके मनचाहा ही चीज पायें। अंग्रेजों ने मार-काट की और हम भी कर सकते हैं। यह बात तो ठीक है। लेकिन मार-काट से जैसी चीज उन्हें मिली, वैसी ही हम भी ले सकते हैं। आप कबूल करेंगे कि वैसी चीज हमें नहीं चाहिये। आप मानते हैं कि साधन और साध्य, जरिया और मुराद के बीच कोई संबंध नहीं है। यह बहुत बड़ी भूल है। इस भूल के कारण जो लोग धार्मिक कहलाते हैं उन्होंने घोर कर्म किये हैं।

यह तो धतूरे का पौधा लगाकर मोगरे के फूल की इच्छा करने जैसा हुआ। मेरे लिए समुद्र पार करने का साधन जहाज ही हो सकता है। अगर मैं पानी में बैल गाड़ी डाल दूँ तो वह गाड़ी और मैं दोनों समुद्र के तले पहुंच जायेंगे। जैसे देव वैसी पूजा। यह वाक्य बहुत सोचने लायक हैं। उसका गलत अर्थ करके लोग भुलावे में पड़ गये हैं। साधन बीज है और साध्य हासिल करने की चीज पेड़ है। इसलिए जितना सम्बन्ध बीज और पेड़ के बीच है, उतना ही साधन और साध्य के बीच है। शैतान को भजकर मैं ईश्वर भजन का फल पाऊँ, यह कभी हो ही नहीं सकता। इसलिए यह कहना कि हमें तो ईश्वर को ही भजना है, साधन भले शैतान हो, बिल्कुल अज्ञान की बात है। जैसी करनी वैसी भरनी।

अंग्रेजों ने मार काट करके 1833 में वोट के (मत के) विशेष अधिकार पाये। क्या मार काट कर के वे अपना फर्ज समझ सके। उनकी मुराद अधिकार पाने की थी, इसलिए उन्होंने मार-काट मचाकर अधिकार पा लिये, सच्चे अधिकार तो फर्ज के फल हैं। वे अधिकार उन्होंने नहीं पाये। नतीजा यह हुआ कि सबने अधिकार पाने का प्रयत्न किया लेकिन फर्ज सो गया। जहां सभी अधिकार की बात करें, वहां कौन किसको दे। वे कोई भी फर्ज अदा नहीं करते।

ऐसा कहने का मतलब यहां नहीं है। लेकिन जो अधिकार वे मांगते थे, उन्हें हासिल करके उन्होंने वे फर्ज पूरे नहीं किये जो उन्हें करने चाहिये थे। उन्होंने योग्यता प्राप्त नहीं की। इसलिए उनके अधिकार उनकी गरदन पर जूप की तरह सवार हो बैठे हैं। इसलिए जो कुछ उन्होंने पाया है वह उनके साधन का ही परिणाम है। जैसी चीज उन्हें चाहिये थी वैसे साधन उन्होंने काम में लिये।

मुझे अगर आपसे आपकी घड़ी छीन लेनी हो तो बेशक आपके साथ मुझे मार पीट करनी होगी, लेकिन अगर मुझे आपकी घड़ी खरीदनी हो, तो आपको दाम देने होंगे। अगर मुझे बख्शिश के तौर पर आपकी घड़ी लेनी होगी तो मुझे आपसे विनय करनी होगी। घड़ी पाने के लिए मैं जो साधन काम में लूंगा उसके अनुसार वह चोरी का माल, मेरा माल या बख्शिश की चीज होगी। तीन साधनों के तीन अलग परिणाम आयेंगे, तब आप कैसे कह सकते हैं कि साधन की कोई चिन्ता नहीं। अब चोर को घर में से निकालने की मिसाल लें। मैं आपसे इसमें सहमत नहीं हूँ कि चोर को निकालने के लिए चाहे जो साधन काम में लिया जा सकता है।

अगर मेरे घर में मेरा पिता चोरी करने आयेगा तो मैं एक साधन काम में लूंगा। अगर कोई मेरी पहचान का चोरी करने आयेगा तो मैं तीसरा साधन काम में नहीं लूंगा और कोई अनजान आदमी आयेगा तो मैं तीसरा साधन काम में लूंगा। अगर वह गोरा हो, तो एक साधन और हिन्दुस्तानी हो, तो दूसरा साधन काम में लाना चाहिये। ऐसा भी शायद आप कहेंगे अगर कोई मुर्दा लड़का चोरी करने आया होगा, तो मैं बिल्कुल दूसरा ही साधन काम में लूंगा। अगर वह मेरी बराबरी का होगा, तो और ही कोई साधन मैं काम में लूंगा, और अगर वह हथियारबंद तगड़ा आदमी होगा तो मैं चुपचाप सो रहूंगा। इसमें पिता से लेकर ताकतवर आदमी तक अलग-अलग साधान इस्तेमाल किये जायेंगे।

पिता होगा तो भी मुझे लगता है कि मैं सो रहूंगा और हथियार से लैस कोई होगा, तो भी मैं सो रहूंगा। पिता में भी बल है, हथियारबंद आदमी में भी बल है। दोनों बलों को बस होकर मैं अपनी चीज को जाने दूंगा। पिता का बल मुझे दया से रुलायेगा। हथियारबंद आदमी का बल मेरे मन में गुस्सा पैदा करेगा। हम कट्टर दुश्मन हो जायेंगे। ऐसी मुश्किल हालत हैं। इन मिसालों से हम दोनों साधनों के निर्णय पर तो नहीं पहुंच सकेंगे। मुझे तो सब चोरों के बारे में क्या करना चाहिये यह सूझता है। लेकिन उस इलाज से आप घबरा जायेंगे, इसलिए मैं आपके सामने उसे नहीं रखता। आप इसे समझ लें और अगर नहीं समझेंगे तो हर वक्त आपको अलग साधन काम में लेने होंगे। लेकिन आपने इतना तो

देखा कि चोर को निकालने के लिए चाहे जो साधन काम नहीं देगा और जैसा साधन आपका होगा उसके मुताबिक नतीजा आयेगा। आपका धर्म किसी भी साधन से चोर को घर से निकालने का हरगिज नहीं है।

जरा आगे बढ़े। वह हथियारबंद आदमी आपकी चीज ले गया है। आपने उसे याद रखा है। आपके मन में उस पर गुस्सा भरा है। आप उस लुच्चे को अपने लिए नहीं लेकिन लोगों के कल्याण के लिए सजा देना चाहते हैं। आपने कुछ आदमी जमा किये, उसके घर पर आपने धावा बोलने का निश्चय किया। उसे मालूम हुआ, तो वह भागा। उसने दूसरे लूटेरे जमा किये। वह भी खिजा हुआ है। अब तो उसने आपका घर दिन दहाड़े लूटने का संदेश आपको भेजा है। आप उसके मुकाबले के लिए तैयार बैठे हैं। इस बीच लूटेरा आपके आसपास के लोगों को हैरान करता है। वे आपसे शिकायत करते हैं। आप कहते हैं, यह सब मैं आप ही के लिए तो करता हूं, मेरा माल गया उसकी तो कोई बिसात ही नहीं। लोग कहते हैं पहले तो वह हमें लूटता नहीं था। आपने जब से उसके साथ लड़ाई शुरू की है, तभी से उसने यह काम शुरू किया है।

आप दुविधा में फंस जाते हैं। गरीबों के ऊपर आपको रहम है। उनकी बात सही है। अब क्या किया जाय? क्या लुटेरे को छोड़ दिया जाय? इससे तो आपकी इज्जत चली जायेगी, इज्जत सबको प्यारी होती है। आप गरीबों से कहते हैं, कोई फिक्र नहीं, आइये मेरा धन आपका ही है। मैं आपको हथियार देता हूं। मैं आपको उनका उपयोग सिखाऊंगा। आप उस बदमाश को मारिये। छोड़िये नहीं! यों लड़ाई बढ़ी, लुटेरे बढ़े, लोगों ने खुद होकर मुसीबत मोल ली। चोर से बदला लेने का परिणाम यह आया कि नींद बेचकर जागरण मोल लिया। जहां शांति थी वहां अशांति पैदा हुई। पहले तो जब मौत आती तभी मरते थे। अब तो सदा ही मरने के दिन आये। लोग हिम्मत हारकर पस्तहिम्मत बने। इसमें मैंने बढ़ा चढ़ाकर कुछ नहीं कहा है, यह आप धीरज से सोचेंगे तो देख सकेंगे। यह एक साधन हुआ।

अब दूसरे साधन की जांच करें, चोर को आप अज्ञान मान लेते हैं। कभी मौका मिलने पर उसे समझाने का आपने सोचा है। आप यह भी सोचते हैं कि वह भी हमारे जैसा आदमी है। उसने किस इरादे से चोरी की, यह आपको क्या मालूम? आपके लिए अच्छा रास्ता तो यही है कि जब मौका मिले तब आप उस आदमी के भीतर से चोरी का बीज ही निकाल दें। ऐसा आप सोच रहे हैं, इतने में वे भाई साहब फिर से चोरी करने आते हैं। आप नाराज नहीं होते, आपको उस पर दया आती है। आप सोचते हैं कि यह आदमी रोगी है।

आप खिड़की दरवाजे खोले देते हैं। आप अपनी सोने की जगह बदल देते हैं। आप अपनी चीजें झट लें जाई जा सकें, इस तरह रख देते हैं। चोर आता है। वह घबराता है। यह सब उसके लिये ही मालूम होता है। माल तो वह ले जाता है, लेकिन उसका मन चक्कर में पड़ जाता है। वह गांव में जांच पड़ताल करता है। आपकी दया के बारे में उसको मालूम होता है। वह पछताता है और आपसे माफी मांगता है। आपकी चीजें वापस ले आता है। वह चोरी का धंधा छोड़ देता है। आपका सेवक बन जाता है। आप उसे काम धंधे में लगा देते हैं। यह दूसरा साधन है।

आप देखते हैं कि अलग अलग साधनों के अलग अलग नतीजे आते हैं। सब चोर ऐसा ही बरताव करेंगे या सबमें आपका सा दयाभाव होगा, ऐसा मैं इससे साबित नहीं करना चाहता। लेकिन यही दिखाना चाहता हूं कि अच्छे नतीजे लाने के लिए अच्छे ही साधन चाहिये और अगर सब नहीं तो ज्यादातर मामलों में हथियार बल से दयाबल ज्यादा ताकतवर साबित होता है। हथियार में हानि है, दया में कभी नहीं।

अब अरजी की बात लें। जिसके पीछे बल नहीं है वह अरजी निकम्मी है, इसमें कोई शक नहीं। फिर भी स्व. न्यायमूर्ति रानडे कहते थे कि अरजी लोगों को तालीम देने का एक साधन है। उससे लोगों को अपनी स्थिति का भान कराया जा सकता है और राजकर्ता को चेतावनी दी जा सकती है। यों सोचें तो अरजी निकम्मे की चीज नहीं है। बराबरी का आदमी अरजी करेगा तो वह उसकी नम्रता की निशानी मानी जायेगी। गुलाम अरजी करेगा तो वह उसकी गुलामी की निशानी होगी। जिस अरजी के पीछे बल है, वह बराबरी के आदमी की अरजी है, और वह अपनी मांग अरजी के रूप में रखता है, यह उसकी खानदानियत को बताता है।

अरजी के पीछे दो तरह के बल होते हैं। एक है अगर आप नहीं देंगे तो हम आपको मारेंगे, यह गोला बारूद का बल है। उसका बुरा नतीजा हम देख चुके, दूसरा बल यह है अगर आप नहीं देंगे तो हम आपके अरज दार नहीं रहेंगे। हम अरज दार होंगे तो आप बादशाह बने रहेंगे। हम आपके साथ कोई व्यवहार नहीं रखेंगे। इस बल को चाहे दया बल कहें, चाहे

आत्मबल कहें या सत्याग्रह कहें। यह बल अविनाशी है और इस बल का उपयोग करने वाला अपनी हालत को बराबर समझता है। इसका समावेश हमारे बुजुर्गों ने, एक नहीं सब रोगों की दवा में किया है। यह बल जिसमें है उसका हथियार बल कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

बच्चा अगर आग में पैर रखे, तो उसको दबाने की मिसाल की छान बीन करने में तो आप हार जायेंगे। बच्चे के साथ आप क्या करेंगे? मान लीजिये कि बच्चा ऐसा जोर करे कि आपको मारकर वह आग में जा पड़े, तब तो आग में पड़े बिना वह रहेगा ही नहीं। इसका उपाय आपके पास यह है या तो आग में पड़ना आपसे देखा नहीं जाता इसलिए आप स्वयं आग में पड़कर अपनी जान दे दें। आप बच्चे के प्राण तो नहीं ही लेंगे। आप में अगर संपूर्ण दयाभाव न हो तो मुमकिन है कि आप अपने प्राण नहीं देंगे तो फिर लाचारी से आप बच्चे को आग में कूदने देंगे। इस तरह आप बच्चे पर हथियार बल का उपयोग नहीं करते हैं। बच्चे को आप और किसी तरह रोक सकें तो रोकेंगे और वह बल कम दर्जे का लेकिन हथियार बल ही होगा। ऐसा भी आप न समझ लें। वह बल और ही प्रकार का है। उसी को समझ लेना है।

बच्चे को रोकने में आप सिर्फ बच्चे का स्वार्थ देखते हैं। जिसके ऊपर आप अंकुश रखना चाहते हैं, उस पर उसके स्वार्थ के लिए ही अंकुश रखेंगे। यह मिसाल अंग्रेजों पर जरा भी लागू नहीं होती। आप अंग्रेजों पर जो हथियार बल का उपयोग करना चाहते हैं, उसमें आप अपना ही, यानी प्रजा का स्वार्थ देखते हैं। उसमें दया जरा भी नहीं है।

अगर आप यों कहें कि अंग्रेज जो अधम नीच काम करते हैं, वह आग है, वे आग में अज्ञान के कारण जाते हैं और आप दया से अज्ञानी को यानी बच्चे को उससे बचाना चाहते हैं, तो इस प्रयोग को आजमाने के लिए आपको जहां जहां जो भी आदमी नीच काम करता होगा वहां वहां पहुंचना होगा और सामने वाले के बच्चे के प्राण लेने के बजाय अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ेगी। इतना पुरुषार्थ आप करना चाहें तो कर सकते हैं। आप स्वतंत्र हैं। पर यह बात बिलकुल असंभव है।

17. सत्याग्रह-आत्मबल

पाठक: आप जिस सत्याग्रह या आत्मबल की बात करते हैं, उसका इतिहास में कोई प्रमाण है। आज तक दुनिया का एक भी राष्ट्र इस बल से ऊपर चढ़ा हो, ऐसा देखने में नहीं आता। मार काट के बिना बुरे लोग सीधे रहेंगे ही नहीं, ऐसा विश्वास अभी भी मेरे मन में बना हुआ है।

संपादक : कवि तुलसीदासजी ने लिखा है :

दया धरमको मूल है, पाप मूल अभिमान,

तुलसी दया न छोड़िय, जब लग घट में प्रान।

मुझे तो यह वाक्य शास्त्र-वचन जैसा लगता है। जैसे दो और दो चार ही होते हैं, उतना ही भरोसा मुझे ऊपर के वचन पर है। दयाबल आत्मबल है, सत्याग्रह है। और इस बल के प्रमाण पग पग पर दिखाई देते हैं। अगर यह बल नहीं होता तो पृथ्वी रसातल (सात पातालों में से एक) में पहुंच गई होती। लेकिन आप तो इतिहास का प्रमाण चाहते हैं। इसके लिए हमें इतिहास का अर्थ जानना होगा। इतिहास का शब्दार्थ है 'ऐसा हो गया'। ऐसा अर्थ करें तो आपको सत्याग्रह के कई प्रमाण दिये जा सकेंगे।

इतिहास जिस अंग्रेजी शब्द का तरजुमा है और जिस शब्द का अर्थ बादशाहों या राजाओं की तवारीख होता है, उसका अर्थ लेने से सत्याग्रह का प्रमाण नहीं मिल सकता। जस्ते की खान में आप अगर चांदी ढूढ़ने जायें, तो वह कैसे मिलेगी। 'हिस्टरी' में दुनिया के कोलाहल की ही कहानी मिलेगी इसलिए गोरे लोगों में कहावत है कि जिस राष्ट्र की हिस्टरी (कोलाहल) नहीं है, वह राष्ट्र सुखी है। राजा लोग कैसे खेलते थे? कैसे खून करते थे? कैसे बैर रखते? ये यह सब हिस्टरी में मिलता है। अगर यही इतिहास होता, अगर इतना ही हुआ होता, तब तो यह दुनिया कब की डूब गई होती।

अगर दुनिया की कथा लड़ाई से शुरू हुई होती तो आज एक भी आदमी जिंदा नहीं रहता। जो प्रजा लड़ाई का ही भोग

(शिकार) बन गई, उसकी ऐसी ही दशा हुई है। आस्ट्रेलिया के गोरों ने उनमें से शायद ही किसी को जीने दिया है। जिनकी जड़ ही खत्म हो गई, वे लोग सत्याग्रही नहीं थे। जो जिंदा रहेंगे, वे देखेंगे कि आस्ट्रेलिया के गोरों के भी यही हाल होंगे। जो तलवार चलाते हैं उनकी मौत तलवार से ही होती है। हमारे यहां ऐसी कहावत है कि तैराक की मौत पानी में।

दुनिया में इतने लोग आज भी जिन्दा हैं, यह बताता है कि दुनिया का आधार हथियार बल पर नहीं है, परन्तु सत्य, दया या आत्म बल पर है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण तो यही है कि दुनिया लड़ाई के हंगामों के बावजूद टिकी हुई है। इसलिए लड़ाई के बल के बजाय दूसरा ही बल उसका आधार है। हजारों बल्कि लाखों लोग प्रेम के बस रहकर अपना जीवन बसर करते हैं। करोड़ों कुटुम्बों का क्लेश प्रेम की भावना में समा जाता है, डूब जाता है। सैंकड़ों राष्ट्र मेलजोल से रहे हैं, इसको हिस्ट्री नोट नहीं करती। हिस्ट्री कर भी नहीं सकती। जब इस दया की, प्रेम की और सत्य की धारा रुकती है, टूटती है, तभी इतिहास में वह लिखा जाता है।

एक कुटुम्ब के दो भाई लड़े। इसमें एक ने दूसरे के खिलाफ सत्याग्रह का बल काम में लिया। दोनों फिर से मिल जुलकर रहने लगे इसका नोट कौन लेता है? अगर दोनों भाइयों में वकीलों की मदद से या दूसरे कारणों से वैरभाव बढ़ता और वे हथियारों या अदालतों (अदालत एक तरह का हथियार बल, शरीर बल ही है।) के जरिये लड़ते तो उनके नाम अखबारों में छपते। अड़ोस पड़ोस के लोग जानते और शायद इतिहास में भी लिखे जाते। जो बात कुटुम्बों जमातों और इतिहास के बारे में सच है, वही राष्ट्रों के बारे में भी समझ लेना चाहिये। कुटुम्ब के लिए एक कानून और राष्ट्र के लिए दूसरा ऐसा मानने का कोई कारण नहीं है। हिस्ट्री अस्वाभाविक बातों को दर्ज करती है। सत्याग्रह स्वाभाविक है, इसलिए उसे दर्ज करने की जरूरत ही नहीं है।

पाठक: आपके कहे मुताबिक तो यही समझ में आता है कि सत्याग्रह की मिसालें इतिहास में नहीं लिखी जा सकतीं। इस सत्याग्रह को ज्यादा समझने की जरूरत है। आप जो कुछ कहना चाहते हैं, उसे ज्यादा साफ शब्दों में कहेंगे तो अच्छा होगा।

संपादक: सत्याग्रह या आत्मबल को अंग्रेजी में पैसिव रेजिस्टेंस कहा जाता है। जिन लोगों ने अपने अधिकार पाने के लिए खुद दुख सहन किया था, उनके दुख सहने के ढंग के लिए यह शब्द बरता गया है। उसका ध्येय लड़ाई के ध्येय से उलटा है। जब मुझे कोई काम पसन्द न आये और वह काम मैं न करूं तो उसमें मैं सत्याग्रह या आत्मबल का उपयोग करता हूं।

मिसाल के तौर पर मुझे लागू होनेवाला कोई कानून सरकार ने पास किया। वह कानून मुझे पसन्द नहीं है। अब अगर मैं सरकार पर हमला करके यह कानून रद्द करवाता हूं, तो कहा जायगा कि मैंने शरीर बलका उपयोग किया। अगर मैं उस कानून को मंजूर ही न करूं और उस कारण से होनेवाली सजा भुगत लूं, तो कहा जायगा कि मैंने आत्मबल या सत्याग्रह से काम लिया। सत्याग्रह में मैं अपना ही बलिदान देता हूं।

यह तो सब कोई कहेंगे कि दूसरे का भोग बलिदान लेने से अपना भोग देना ज्यादा अच्छा है। इसके सिवा सत्याग्रह से लड़ते हुए अगर लड़ाई गलत ठहरी तो सिर्फ लड़ाई छेड़नेवाला ही दुख भोगता है। यानी अपनी भूल की सजा वह खुद भोगता है। ऐसी कई घटनायें हुई हैं जिनमें लोग गलती से शामिल हुए थे। कोई भी आदमी दावे से यह नहीं कह सकता कि फलां काम खराब ही है। लेकिन जिसे वह खराब लगा उसके लिए तो वह खराब ही है। अगर ऐसा ही है तो फिर उसे वह काम नहीं करना चाहिये। और उसके लिए दुख भोगना कष्ट सहन करना चाहिये। यही सत्याग्रह की कुंजी है।

पाठक: तब तो आप कानून के खिलाफ होते हैं। यह बेवफाई कही जायगी। हमारी गिनती हमेशा कानून को माननेवाली प्रजा में होती है। आप तो एक्स्ट्रीमिस्ट से भी आगे बढ़ते दीखते हैं। एक्स्ट्रीमिस्ट कहता है कि जो कानून बन चुके हैं उन्हें तो मानता ही चाहिये, लेकिन कानून खराब हों तो उनके बनानेवालों को मारकर भगा देना चाहिये।

संपादक: मैं आगे बढ़ता हूं या पीछे रहता हूं इसकी परवाह न आपको होनी चाहिये न मुझे। हम तो जो अच्छा है, उसे खोजना चाहते हैं और उसके मुताबिक बरतना चाहते हैं।

हम कानून को माननेवाली प्रजा है, इसका सही अर्थ तो यह है कि हम सत्याग्रही प्रजा हैं। कानून जब पसन्द न आये तब हम कानून बनानेवालों का सिर नहीं तोड़ते बल्कि उन्हें रद्द कराने के लिए खुद उपवास करते हैं, खुद दुख उठाते हैं।

हमें अच्छे या बुरे कानून को मानना चाहिये। ऐसा अर्थ तो आज कल का है। पहले ऐसा नहीं था। तब चाहे जिस कानून को लोग तोड़ते थे और उसकी सजा भोगते थे।

कानून हमें पसन्द न हों तो भी उनके मुताबिक चलना चाहिये, यह सिखावन मर्दानगी के खिलाफ है, धर्म के खिलाफ है और गुलामी की हद है।

सरकार तो कहेगी कि हम उसके सामने नंगे होकर नाचें, तो क्या हम नाचेंगे? अगर मैं सत्याग्रही होऊं तो सरकार से कहूंगा यह कानून आप अपने घर में रखिये। मैं न तो आपके सामने नंगा होनेवाला हूँ और न नाचनेवाला हूँ। लेकिन हम ऐसे असत्याग्रही हो गये हैं कि सरकार के जुल्म के सामने झुककर नंगे होकर नाचने से भी ज्यादा नीच काम करते हैं।

जिस आदमी में सच्ची इन्सानियत है, जो खुदा से ही डरता है, वह और किसी से नहीं डरेगा। दूसरे के बनाये हुए कानून उसके लिए बंधनकारक नहीं होते। बेचारी सरकार भी नहीं कहती कि तुम्हें ऐसा करना ही पड़ेगा वह कहती है कि तुम ऐसा नहीं करोगे तो तुम्हें सजा होगी। हम अपनी अधम दशा के कारण मान लेते हैं कि हमें ऐसा ही करना चाहिये। यह हमारा फर्ज है, यह हमारा धर्म है।

अगर लोग एक बार सीख लें कि जो कानून हमें अन्यायी मालूम हो उसे मानना नामर्दगी है, तो हमें किसी का भी जुल्म बांध नहीं सकता। यही स्वराज्य की कुंजी है।

ज्यादा लोग जो कहें, उसे थोड़े लोगों को मान लेना चाहिये। यह तो अनीश्वरी बात है, एक वहम है। ऐसी हजारों मिसालें मिलेंगी जिनमें बहुतों ने जो कहा वह गलत निकला हो और थोड़े लोगों ने जो कहा वह सही निकला हो। सारे सुधार बहुत से लोगों के खिलाफ जाकर कुछ लोगों ने ही दाखिल करवाये हैं। ठगों के गांव में अगर बहुत से लोग यह कहें कि ठगविद्या सीखनी ही चाहिये तो क्या कोई साधु ठग बन जायगा। हरगिज नहीं। अन्यायी कानून को मानना चाहिये, यह वहम जब तक दूर नहीं होता, तब कि हमारी गुलामी जानेवाली नहीं है। और इस वहम को सिर्फ सत्याग्रही ही दूर कर सकता है।

शरीर बल का उपयोग करना, गोला बारूद काम में लाना, हमारे सत्याग्रह के कानून के खिलाफ है। इसका अर्थ तो यह हुआ कि हमें जो पसंद है वह दूसरे आदमी से हम (जबरन) करवाना चाहते हैं। अगर यह सही हो तो फिर यह सामनेवाला आदमी भी अपनी पसंद का काम हमसे करवाने के लिए हम पर गोला बारूद चलाने का हकदार है। इस तरह तो हम कभी एक राय पर पहुंचेंगे ही नहीं। कोल्हू के बैल की तरह आंखों पर पट्टी बांधकर भले ही हम मान लें कि हम आगे बढ़ते हैं। लेकिन दरअसल तो बैल की तरह हम गोल गोल चक्कर ही काटते रहते हैं। जो लोग ऐसा मानते हैं कि जो कानून खुद को नापसन्द है उसे मानने के लिए आदमी बंधा हुआ नहीं है। उन्हें तो सत्याग्रह को ही सही साधन मानना चाहिये, वरना बड़ा विकट नतीजा आयेगा।

पाठक: आप जो कहते हैं, उस पर से मुझे लगता है कि सत्याग्रह कमजोर आदमियों के लिए काफी काम का है। लेकिन जब वे बलवान बन जायें, तब तो उन्हें तोप (हथियार) ही चलाना चाहिये।

संपादक: यह तो आपने बड़े अज्ञान की बात कही। सत्याग्रह सबसे बड़ा सर्वोपरि बल है। वह जब तोपबल से ज्यादा काम करता है, तो फिर कमजोरों का हथियार कैसे माना जायगा। सत्याग्रह के लिए जो हिम्मत और बहादुरी चाहिये, वह तोप का बल रखने वाले के पास हो ही नहीं सकती। क्या आप यह मानते हैं कि डरपोक और कमजोर आदमी नापसन्द कानून को तोड़ सकेगा? एक्स्ट्रीमिस्ट तोपबल पशुबल के हिमायती हैं। वे क्यों कानून को मानने की बात कर रहे हैं? मैं उनका दोष नहीं निकालता, वे दूसरी कोई बात कर ही नहीं सकते। वे खुद जब अंग्रेजों को मारकर राज्य करेंगे तब आपसे और हमसे (जबरन) कानून मनवाना चाहेंगे, उनके तरीके के लिए यही कहना ठीक है। लेकिन सत्याग्रही तो कहेगा कि जो कानून उसे पसन्द नहीं है उन्हें वह स्वीकार नहीं करेगा। फिर चाहे उसे तोप के मुंह पर बांधाकर उसकी धज्जियां क्यों न उड़ा दी जायं।

आप क्या मानते हैं। तोप चलाकर सैकड़ों को मारने में हिम्मती की जरूरत है या हंसते-हंसते तोप के मुंह पर बांधकर धज्जिया उड़ने देने में हिम्मत की जरूरत है? खुद मौत को हथेली में रखकर जो चलता फिरता है वह रणवीर है या दूसरों की मौत को अपने हाथ में रखता है वह रणवीर है? यह निश्चित मानिये कि नामर्द आदमी घड़ी भर के लिए भी

सत्याग्रही नहीं रह सकता। हां यह सही है कि शरीर से जो दुबला हो वह भी सत्याग्रही हो सकता है। एक आदमी भी (सत्याग्रही) हो सकता है और लाखों लोग भी हो सकते हैं। मर्द सत्याग्रही हो सकता है औरत भी हो सकती है। उसे अपना लश्कर तैयार करने की जरूरत नहीं रहती। उसे पहलवानों की कुश्ती सीखने की जरूरत नहीं रहती। उसने अपने मन को काबू में किया कि फिर वह वनराज सिंह की तरह गर्जना कर सकता है, और जो उसके दुश्मन बन बैठे हैं, उनके दिल इस गर्जना से फट जाते हैं।

सत्याग्रह ऐसी तलवार है, जिसके दोनों ओर धार है। उसे चाहे जैसे काम में लिया जा सकता है। जो उसे चलाता है और जिस पर वह चलाई जाती है वे दोनों सुखी होते हैं। वह खून नहीं निकालती लेकिन उससे भी बड़ा परिणाम ला सकती है। उसको जंग नहीं लग सकता। उसे कोई (चुराकर) ले नहीं जा सकता। अगर सत्याग्रही दूसरे सत्याग्रही के साथ होड़ में उतरता है, तो उसमें उसे थकान लगती ही नहीं। सत्याग्रही की तलवार को म्यान की जरूरत नहीं रहती। उसे कोई छीन नहीं सकता। फिर भी सत्याग्रह को आप कमजोरों का हथियार मानें तब तो उसे अंधेर ही कहा जायेगा।

पाठक: आपने कहा कि वह हिन्दुस्तान का खास हथियार है। तो क्या हिन्दुस्तान में तोप के बल का कभी उपयोग नहीं हुआ है?

संपादक: आप हिन्दुस्तान का अर्थ मुड़ीभर राजा करते हैं। मेरे मन में तो हिन्दुस्तान का अर्थ वे करोड़ों किसान हैं जिनके सहारे राजा और हम सब जी रहे हैं।

राजा तो हथियार काम में लायेंगे ही, उनका वह रिवाज ही हो गया है। उन्हें हुक्म चलाना है। लेकिन हुक्म माननेवाले को तोपबल की जरूरत नहीं है। दुनिया के ज्यादातर लोग हुक्म माननेवाले हैं। उन्हें या तो तोपबल या सत्याग्रह का बल सिखाना चाहिये। जहां वे तोपबल सीखते हैं, वहां राजा प्रजा दोनों पागल जैसे हो जाते हैं। जहां हुक्म माननेवालों ने सत्याग्रह करना सीखा है वहां राजा का जुल्म उसकी तीन गज की तलवार से आगे नहीं जा सकता और हुक्म माननेवालों ने अन्यायी हुक्म की परवाह भी नहीं की है। किसान किसी के तलवार बल के बस न तो कभी हुए हैं, और न होंगे। वे तलवार चलाना नहीं जानते, न किसी की तलवार से वे डरते हैं। उन्होंने मौत का डर छोड़ दिया है, इसलिए सब का डर छोड़ दिया है। यहां मैं कुछ बढ़ा चढ़ाकर तस्वीर खींचता हूं, यह ठीक है। लेकिन हम जो तलवार के बल से चकित हो गये हैं, उनके लिए यह कुछ ज्यादा नहीं है।

बात यह है कि किसानों ने, प्रजा मंडलों ने अपने और राज्य के कारोबार में सत्याग्रह को काम में लिया है। जब राजा जुल्म करता है तब प्रजा रूठती है। यह सत्याग्रह ही है।

मुझे याद है कि एक रियासत में रैयत को अमुक हुक्म पसन्द नहीं आया, इसलिए रैयत ने हिजरत करना, गांव खाली करना शुरू कर दिया। राजा घबड़ाये। उन्होंने रैयत से माफी मांगी और हुक्म वापस ले लिया। ऐसी मिसालें तो बहुत मिल सकती हैं। लेकिन वे ज्यादातर भारत भूमि की ही उपज होंगी। ऐसी रैयत जहां है, वहीं स्वराज्य है। इसके बिना स्वराज्य कुराज्य है।

पाठक: तो क्या आप यह कहेंगे कि शरीर को कसने की जरूरत ही नहीं है?

संपादक: ऐसा मैं कभी नहीं कहूंगा शरीर को कसे बिना सत्याग्रही होना मुश्किल है। अक्सर जिन शरीरों को गलत लड़ा लड़ा कर या सहलाकर कमजोर बना दिया गया है, उनमें रहनेवाला मन भी कमजोर होता है। और जहां मन का बल नहीं है वहां आत्मबल कैसे हो सकता है? हमें बाल विवाह बगैरा के कुरिवाज को और ऐश आराम की बुराई को छोड़कर शरीर को कसना ही होगा। अगर मैं मरियल और कमजोर आदमी को यकायक तोप के मुंह पर खड़ा हो जाने के लिए कहूं तो लोग मेरी हंसी उड़ायेंगे।

पाठक: आपके कहने से तो ऐसा लगता है कि सत्याग्रही होना मामूली बात नहीं है, और अगर ऐसा है कोई आदमी सत्याग्रही कैसे बन सकता है, यह आपको समझाना होगा।

संपादक: सत्याग्रही होना आसान है। लेकिन जितना वह आसान है उतना ही मुश्किल भी है। चौदह बरस का एक लड़का सत्याग्रही हुआ है। यह मेरे अनुभव की बात है। रोगी आदमी सत्याग्रही हुए हैं, यह भी मैंने देखा है। मैंने यह भी देखा है कि जो लोग शरीर से बलवान थे और दूसरी बातों में भी सुखी थे, वे सत्याग्रही नहीं हो सके। अनुभव से मैं देखता हूं

कि जो देश के भले के लिए सत्याग्रही होना चाहता है, उसे ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। गरीबी अपनानी चाहिये। सत्य का पालन तो करना ही चाहिये और हर हालत में अभय बनना चाहिये। ब्रह्मचर्य एक महान व्रत है, जिसके बिना मन मजबूत नहीं होता। ब्रह्मचर्य का पालन न करने से मनुष्य वीर्यवान नहीं रहता। नामर्द और कमजोर हो जाता है।

जिसका मन विषय में भटकता है, वह क्या शेर मारेगा? यह बात अनगिनत मिसालों से साबित की जा सकती है। तब सवाल यह उठता है कि घर संसारी को क्या करना चाहिये? लेकिन ऐसा सवाल उठाने की कोई जरूरत नहीं। घर संसारी ने जो संग किया (स्त्री की सोहबत की) वह विषय भोग नहीं है, ऐसा कोई नहीं कहेगा। संतान पैदा करने के लिए ही अपनी स्त्री का संग करने की बात कही गयी है। और सत्याग्रही को संतान पैदा करने की इच्छा नहीं होनी चाहिये। इसलिए संसारी होने पर भी वह ब्रह्मचर्य का पालन कर सकता है। यह बात ज्यादा खोलकर लिखने की जरूरत नहीं। स्त्री का क्या विचार है? यह सब कैसे हो सकता है? ऐसे विचार मन में पैदा होते हैं, फिर भी जिसे महान कार्यों में हिस्सा लेना है, उसे तो ऐसे सवालों का हल ढूढ़ना ही होगा।

जैसे ब्रह्मचर्य की जरूरत है, वैसे ही गरीबी को अपनाने की भी जरूरत है। पैसे का लोभ और सत्याग्रह का सेवन पालन (दोनों साथ साथ) कभी नहीं चल सकते। लेकिन मेरा मतलब यह नहीं है कि जिसके पास पैसा है, वह उसे फेंक दे। फिर भी पैसे के बारे में लापरवाह रहने की जरूरत है। सत्याग्रह का सेवन करते हुए अगर पैसा चला जाय तो चिन्ता नहीं करनी चाहिये।

जो सत्य का सेवन नहीं करता वह सत्य का बल, सत्य की ताकत कैसे दिखा सकेगा? इसलिए सत्य की तो पूरी पूरी जरूरत रहेगी ही। बड़े से बड़ा नुकसान होने पर भी सत्य को नहीं छोड़ा जा सकता। सत्य के लिए कुछ छिपाने को होता ही नहीं। इसलिए सत्याग्रही के लिए छिपी सेना की जरूरत नहीं होती। जान बचाने के लिए झूठ बोलना चाहिये या नहीं, ऐसा सवाल यहां मन में नहीं उठाना चाहिये। जिसे झूठ का बचाव करना है, वही ऐसे बेकार सवाल उठाता है। जिसे सत्य की ही राह लेनी है, उसके सामने ऐसे धर्म संकट कभी आते ही नहीं। ऐसी मुश्किल हालत में आ पड़े तो भी सत्यवादी उन में से उबर जाता है।

अभय के बिना तो सत्याग्रही की गाड़ी एक कदम भी आगे नहीं चल सकती। अभय संपूर्ण और सब बातों के लिए होना चाहिये। जमीन जायदाद की, झूठी इज्जत का, सगे-सम्बन्धियों का, राज-दरबार का, शरीर को पहुंचने वाली चोटों का और मरण का अभय हो, तभी सत्याग्रह का पालन हो सकता है।

यह सब करना मुश्किल है, ऐसा मानकर इसे छोड़ नहीं देना चाहिये। जो सिर पर पड़ता है उसे सह लेने की शक्ति कुदरत ने हर मनुष्य को दी है। जिसे देश सेवा न करनी है उसे भी ऐसे गुणों का सेवन करना चाहिये।

इसके सिवा हम यह भी समझ सकते हैं कि जिसे हथियार बल पाना होगा उसे भी इन बातों की जरूरत रहेगी। रणवीर होना कोई ऐसी बात नहीं कि किसी ने इच्छा की और तुरन्त रणवीर हो गया। योद्धा (लड़वैया) को ब्रह्मचर्य का पालन करना होगा, भिखारी बनना होगा। रण में जिसके भीतर अभय न हो, वह लड़ नहीं सकता। उसे (योद्धा को) सत्यव्रत का पालन करने की उतनी जरूरत नहीं है, ऐसा शायद किसी को लगे लेकिन जहां अभय है वहां सत्य कुदरती तौर पर रहता ही है। मनुष्य सत्य को छोड़ता है तब किसी तरह के भय के कारण ही छोड़ता है।

इसलिए इन चार गुणों से डर जाने का कोई कारण नहीं है। फिर तलवारबाज को और भी कुछ बेकार कोशिशें करनी पड़ती है, उसका कारण भय है। अगर उसमें पूरी निर्भयता आ जाय तो उसी पल उसके हाथ से तलवार गिर जायगी। फिर उसे तलवार के सहारे की जरूरत नहीं रहती। जिसकी किसी से दुश्मनी नहीं है, उसे तलवार की जरूरत ही नहीं है। सिंह के सामने आनेवाले एक आदमी के हाथ की लाठी अपने आप उठ गई। उसने देखा कि अभय का पाठ उसने सिर्फ जुबानी ही किया था। उसने लाठी छोड़ी और वह निर्भय निडर बना।

18. शिक्षा

पाठक: आपने इतना सारा कहा परन्तु उसमें कहीं भी शिक्षा तालीम की जरूरत तो बताई ही नहीं। हम शिक्षा की कमी की हमेशा शिकायत करते रहते हैं। लाजिमी तालीम देने का आन्दोलन हम सारे देश में देखते हैं।

महाराजा गायकवाड़ ने (अपने राज्य में) लाजिमी शिक्षा शुरू की है। उसकी ओर सबका ध्यान गया है। हम उन्हें धन्यवाद देते हैं। यह सारी कोशिश क्या बेकार ही समझनी चाहिये?

संपादक: अगर हम अपनी सभ्यता को सबसे अच्छी मानते हैं, तब तो मुझे अफसोस के साथ कहना पड़ेगा कि वह कोशिश ज्यादातर बेकार ही है। महाराजा साहब और हमारे दूसरे धुरन्धर नेता सबको तालीम देने की जो कोशिश कर रहे हैं, उसमें उनका हेतु निर्मल है। इसलिए उन्हें धन्यवाद ही देना चाहिये। लेकिन उनके हेतु का जो नतीजा आने की संभावना है, उसे छिपा नहीं सकते।

शिक्षा तालीम का अर्थ क्या है? अगर उसका अर्थ सिर्फ अक्षर ज्ञान ही हो तो वह तो एक साधन जैसी ही हुई। उसका अच्छा उपयोग भी हो सकता है, एक शस्त्र से चीर फाड़ करके बीमार को अच्छा किया जा सकता है और वही शस्त्र किसी की जान लेने के लिए भी काम में लाया जा सकता है। अक्षर ज्ञान का भी ऐसा ही है। बहुत से लोग उसका बुरा उपयोग करते हैं, यह तो हम देखते ही हैं। उसका अच्छा उपयोग प्रमाण में कम ही लोग करते हैं। यह बात अगर ठीक है, तो इससे यह साबित होता है कि अक्षर ज्ञान से दुनिया को फायदे के बदले नुकसान ही हुआ है।

शिक्षा का साधारण अर्थ अक्षर ज्ञान ही होता है। लोगों को लिखना-पढ़ना और हिसाब करना सिखाना बुनियादी या प्राथमिक प्राथमरी शिक्षा कहलाती है। एक किसान ईमानदारी से खुद खेती करके रोटी कमाता है। उसे मामूली तौर पर दुनियावी ज्ञान है। अपने मां बाप के साथ कैसे बरतना, अपनी स्त्री के साथ कैसे बरतना? बच्चों से कैसे पेश आना? जिस देहात में वह बसा हुआ है वहां उसकी चालढाल कैसी होनी चाहिये? इस सबका उसे काफी ज्ञान है। वह नीति के नियम समझता है और उनका पालन करता है।

लेकिन वह अपने दस्तखत करना नहीं जानता। इस आदमी को आप अक्षर ज्ञान देकर क्या करना चाहते हैं? उसके सुख में आप कौन सी बढ़ती करेंगे? क्या उसकी झोपड़ी या उसकी हालत के बारे में आप उसके मन में असंतोष पैदा करना चाहते हैं? ऐसा करना हो तो भी उसे अक्षर ज्ञान देने की जरूरत नहीं है। पश्चिम के असर के नीचे आकर हमने यह बात चलायी है कि लोगों को शिक्षा देनी चाहिये लेकिन उसके बारे में हम आगे पीछे की बात सोचते ही नहीं।

अब ऊंची शिक्षा को लें, मैं भूगोल विद्या सीखा खगोल विद्या (आकाश के तारों की विद्या) सीखा, बीजगणित (एलजेब्रा) भी मुझे आ गया। रेखागणित (ज्यामेट्री) का ज्ञान भी मैंने हासिल किया। भूगर्भ विद्या को भी मैं पी गया, लेकिन उससे क्या? उससे मैंने अपना कौन सा भला किया? अपने आसपास के लोगों का क्या भला किया? किस मकसद से मैंने वह ज्ञान हासिल किया? उससे मुझे क्या फायदा हुआ? एक अंग्रेज विद्वान (हक्सली) ने शिक्षा के बारे में यों कहा है- उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसके शरीर को ऐसी आदत डाली गई है कि वह उसके बस में रहता है, जिसका शरीर चैन से और आसानी से सोंपा हुआ काम करता है। उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसकी बुद्धि शुद्ध शांत और न्यायदयी है।

उसने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसका मन कुदरती कानूनों से भरा है और जिसकी इन्द्रियां उसके बस में हैं, जिसके मन की भावनायें बिल्कुल शुद्ध हैं, जिसे नीच-कामों से नफरत है और जो दूसरों को अपने जैसा मानता है। ऐसा आदमी ही सच्चा शिक्षित (तालीमशुदा) माना जायगा, क्योंकि वह कुदरत के कानून के मुताबिक चलता है। कुदरत उसका अच्छा उपयोग करेगी और वह कुदरत का अच्छा उपयोग करेगा। अगर यही सच्ची शिक्षा हो तो मैं कसम खाकर कहूंगा कि ऊपर जो शास्त्र मैंने गिनाये हैं उनका उपयोग मेरे शरीर या मेरी इन्द्रियों को बस में करने के लिए मुझे नहीं करना पड़ा। इसलिए प्राथमरी प्राथमिक शिक्षा को लीजिये या ऊंची शिक्षा को लीजिये। उसका उपयोग मुख्य बात में नहीं होता। उससे हम मनुष्य नहीं बनते। उससे हम अपना कर्तव्य नहीं मान सकते।

पाठक: अगर ऐसा ही है तो मैं आपसे एक सवाल करूंगा आप ये जो सारी बातें कह रहे हैं, वह किसकी बदौलत कह रहे

हैं? अगर आपने अक्षर ज्ञान और ऊंची शिक्षा नहीं पाई होती तो ये सब बातें आप मुझे कैसे समझा पाते?

संपादक : आपने अच्छी सुनाई। लेकिन आपके सवाल का मेरा जवाब भी सीधा ही है। अगर मैंने ऊंची या नीची शिक्षा नहीं पाई होती, तो मैं नहीं मानता कि मैं निकम्मा आदमी हो जाता। अब ये बातें कहकर मैं उपयोगी बनने की इच्छा रखता हूँ। ऐसा करते हुए जो कुछ मैंने पढ़ा उसे मैं काम में लाता हूँ और उसका उपयोग अगर वह उपयोग हो तो मैं अपने करोड़ों भाइयों के लिए नहीं कर सकता। सिर्फ आप जैसे पढ़े लिखों के लिए ही कर सकता हूँ। इससे भी मेरी ही बात का समर्थन होता है। मैं और आप दोनों गलत शिक्षा के पंजे में फंस गये थे। उसमें से मैं अपने को मुक्त हुआ मानता हूँ। अब वह अनुभव मैं आपको देता हूँ और उसे देते समय ली हुई शिक्षा का उपयोग करके उसमें रही सड़न मैं आपको दिखाता हूँ।

इसके सिवा आपने जो बात मुझे सुनाई उसमें आप गलती खा गये क्योंकि मैंने अक्षर ज्ञान को (हर हालत में) बुरा नहीं कहा है। मैंने तो इतना ही कहा है कि उस ज्ञान की हमें मूर्ति की तरह पूजा नहीं करनी चाहिये वह हमारी कामधेनु नहीं है। वह अपनी जगह पर शोभा दे सकता है। अगर वह जगह यह है जब मैंने और आपने अपनी इन्द्रियों को बस में कर लिया है, जब हमने नीति की नींव मजबूत बना ली हो, तब अगर हमें अक्षर ज्ञान पाने की इच्छा हो तो उसे पाकर हम उसका अच्छा उपयोग कर सकते हैं। वह शिक्षा आभूषण के रूप में अच्छी लग सकती है। लेकिन अक्षर ज्ञान का अगर आभूषण के तौर पर ही उपयोग हो, तो ऐसी शिक्षा को लाजिमी करने की हमें जरूरत नहीं। हमारे पुराने स्कूल ही काफी हैं। वहां नीति को पहला स्थान दिया जाता है। वह सच्ची प्राथमिक शिक्षा है। उस पर हम जो इमारत खड़ी करेंगे वह टिक सकेगी।

पाठक: तब क्या मेरा यह समझना ठीक है कि आप स्वराज्य के लिए अंग्रेजी शिक्षा का कोई उपयोग नहीं मानते?

संपादक: मेरा जवाब हां और नहीं दोनों है। करोड़ों लोगों को अंग्रेजी की शिक्षा देना उन्हें गुलामी में डालने जैसा है। मेकाले ने शिक्षा की जो बुनियाद डाली वह सचमुच गुलामी की बुनियाद थी। उसने इसी इरादे से अपनी योजना बनाई थी। ऐसा मैं नहीं सुझाना चाहता लेकिन उसके काम का नतीजा यही निकला है। यह कितने दुख की बात है कि हम स्वराज्य की बात भी पराई भाषा में करते हैं? जिस शिक्षा को अंग्रेजों ने ठुकरा दिया है वह हमारा सिंगार बनती है, यह जानने लायक है। उन्हीं को विद्वान कहते रहते हैं कि उसमें यह अच्छा नहीं है, वह अच्छा नहीं है। वे जिसे भूल से गये हैं, उसी से हम अपने अज्ञान के कारण चिपके रहते हैं। उनमें अपनी अपनी भाषा की उन्नति करने की कोशिश चल रही है।

वेल्स इंग्लैंड का एक छोटा सा परगना है, उसकी भाषा धूल जैसी नगण्य हैं। ऐसी भाषा का अब जीर्णोद्धार हो रहा है। वेल्स के बच्चे वेल्श भाषा में ही बोलें, ऐसी कोशिश वहां चल रही हैं। इसमें इंग्लैंड के खजांची लायड जार्ज बड़ा हिस्सा लेते हैं। और हमारी दशा कैसी है? हम एक दूसरे को पत्र लिखते हैं तब गलत अंग्रेजी में लिखते हैं। एक साधारण एम. ए. पास आदमी भी ऐसी गलत अंग्रेजी से बचा नहीं होता। हमारे अच्छे से अच्छे विचार प्रगट करने का जरिया है अंग्रेजी। हमारी कांग्रेस का कारोबार भी अंग्रेजी में चलता है।

अगर ऐसा लंबे अरसे तक चला तो मेरा मानना है कि आनेवाली पीढ़ी हमारा तिरस्कार करेगी, और उसका शाप हमारी आत्मा को लगेगा। आपको समझना चाहिये कि अंग्रेजी शिक्षा लेकर हमने अपने राष्ट्र को गुलाम बनाया है। अंग्रेजी शिक्षा से दंभ, राग, जुल्म, वगैरा बढ़े हैं। अंग्रेजी शिक्षा पाये हुए लोगों ने प्रजा को ठगने में उसे परेशान करने में कुछ भी उठा नहीं रखा है। अब अगर हम अंग्रेजी शिक्षा पाये हुए लोग उसके लिए कुछ करते हैं तो उसका हम पर जो कर्ज चढ़ा हुआ है उसका कुछ हिस्सा ही हम अदा करते हैं।

यह क्या कम जुल्म की बात है कि अपने देश में अगर मुझे इन्साफ पाना हो तो मुझे अंग्रेजी भाषा का उपयोग करना चाहिये। बैरिस्टर होने पर मैं स्वभाषा में बोल ही नहीं सकता। दूसरे आदमी को मेरे लिए तरजुमा कर देना चाहिये, यह कुछ कम दंभ है? यह गुलामी की हद नहीं तो और क्या है? इसमें मैं अंग्रेजों का दोष निकालूँ या अपना हिन्दुस्तान को। गुलाम बनानेवाले तो हम अंग्रेजी जाननेवाले लोग ही हैं। राष्ट्र की हाय अंग्रेजों पर नहीं पड़ेगी बल्कि हम पर पड़ेगी। लेकिन मैंने आपसे कहा कि मेरा जवाब हां और ना दोनों है। हां कैसे सो मैंने आपको समझाया।

अब ना कैसे यह बताता हूँ। हम सभ्यता के रोग में ऐसे फंस गये हैं कि अंग्रेजी शिक्षा बिलकुल लिये बिना अपना काम

चला सकें। ऐसा समय अब नहीं रहा जिसने वह शिक्षा पाई है, वह उसका अच्छा उपयोग करें। अंग्रेजों के साथ के व्यवहार में, ऐसे हिन्दुस्तानियों के साथ के व्यवहार में, जिनकी भाषा हम समझ न सकते हों और अंग्रेज खुद अपनी सभ्यता से कैसे परेशान हो गये हैं, यह समझने के लिए अंग्रेजी का उपयोग किया जाय। जो लोग अंग्रेजी पढ़े हुए हैं उनकी संतानों को पहले तो नीति सिखानी चाहिये, उनकी मातृभाषा सिखानी चाहिये और हिन्दुस्तान की एक दूसरी भाषा सिखानी चाहिये।

बालक जब पुख्ता (पक्की) उम्र के हो जाय, तब भले ही वे अंग्रेजी शिक्षा पाये और वह भी उसे मिटाने के इरादे से न कि उसके जरिये पैसे कमाने के इरादे से। ऐसा करते हुए भी हमें यह सोचना होगा कि अंग्रेजी में क्या सीखना चाहिये और क्या नहीं सीखना चाहिये। कौन से शास्त्र पढ़ने चाहिये, यह भी हमें सोचना होगा। थोड़ा विचार करने से ही हमारी समझ में आ जायेगा कि अगर अंग्रेजी डिग्री लेना हम बन्द कर दें तो अंग्रेज हाकिम चौकेंगे।

पाठक: तब कैसी शिक्षा दी जाय?

संपादक: उसका जवाब ऊपर कुछ हद तक आ गया है। फिर भी इस सवाल पर हम और विचार करें। मुझे तो लगता है कि हमें अपनी सभी भाषाओं को उज्ज्वल शानदार बनाना चाहिये। हमें अपनी भाषा में ही शिक्षा लेनी चाहिये? इसके क्या मायने हैं। इसे ज्यादा समझाने का यह स्थान नहीं है। जो अंग्रेजी पुस्तकें काम की हैं। उनका हमें अपनी भाषा में अनुवाद करना होगा। बहुत से शास्त्र सीखने का दंभ और वहम हमें छोड़ना होगा। सबसे पहले तो धर्म की शिक्षा या नीति की शिक्षा दी जानी चाहिये।

हर एक पढ़े-लिखे हिन्दुस्तानी को अपनी भाषा का, हिन्दू को संस्कृत का, मुसलमान को अरबी का, पारसी को फारसी का और सबको हिन्दी का ज्ञान होना चाहिये। कुछ हिन्दुओं को अरबी और मुसलमानों और पारसियों को संस्कृत सीखनी चाहिये। उत्तरी और पश्चिमी हिन्दुस्तान के लोगों को तामिल सीखनी चाहिये। सारे हिन्दुस्तान के लिए जो भाषा चाहिये वह तब से हिन्दी ही होनी चाहिये। उसे उर्दू या देवनागरी लिपि में लिखने की छूट रहनी चाहिये। हिन्दू मुसलमानों के संबंध ठीक रहें इसलिए बहुत से हिन्दुस्तानियों का इन दोनों लिपियों को जान लेना जरूरी है। ऐसा होने से हम आपस के व्यवहार में अंग्रेजी को निकाल सकेंगे।

और यह सब किसके लिए जरूरी है? हम जो गुलाम बन गये हैं, उनके लिए। हमारी गुलामी की वजह से देश की प्रजा गुलाम बनी है। अगर हम गुलामी से छूट जाय तो प्रजा तो छूट ही जायगी।

पाठक: आपने जो धर्म की शिक्षा की बात कही वह बड़ी कठिन है।

संपादक: फिर भी उसके बिना हमारा काम नहीं चल सकता। हिन्दुस्तान कभी नास्तिक नहीं बनेगा। हिन्दुस्तान की भूमि में नास्तिक फल फूल नहीं सकते। बेशक यह काम मुश्किल है। धर्म की शिक्षा का ख्याल करते ही सिर चकराने लगता है। धर्म के आचार्य दंभी और स्वार्थी मालूम होते हैं। उनके पास पहुंचकर हमें नम्र भाव से उन्हें समझाना होगा। उसकी कुंजी मुल्लों, दस्तूरों और ब्राह्मणों के हाथ में है। लेकिन उनमें अगर सदबुद्धि न हो तो अंग्रेजी शिक्षा के कारण हममें जो जोश पैदा हुआ है उसका उपयोग करके हम लोगों को नीति की शिक्षा दे सकते हैं।

यह कोई बहुत मुश्किल बात नहीं है। हिन्दुस्तानी सागर के किनारे पर ही मैल जमा है। उस मैल से जो गंदे हो गये हैं उन्हें साफ होना है। हम लोग ऐसे ही और खुद ही बहुत कुछ साफ हो सकते हैं। मेरी यह टीका करोड़ों लोगों के बारे में नहीं है। हिन्दुस्तान को असली रास्ते पर लाने के लिए हमें ही असली रास्ते पर आना होगा, बाकी करोड़ों लोग तो असली रास्ते पर ही हैं। उसमें सुधार-बिगाड़, उन्नति-अवनति समय के अनुसार होते ही रहेंगे। पश्चिम की सभ्यता को निकाल बाहर करने की ही हमें कोशिश करनी चाहिये। दूसरा सब अपने आप ठीक हो जायगा।

19. मशीनें

-पाठक: आप पश्चिम की सभ्यता को निकाल बाहर करने की बात कहते हैं, तब तो आप यह भी कहेंगे कि हमें कोई भी मशीन नहीं चाहिये।

संपादक: मुझे जो चोट लगी थी उसे यह सवाल करके आपने ताजा कर दिया है। मि. रमेशचन्द्र दत्त की पुस्तक हिन्दुस्तान का आर्थिक इतिहास जब मैंने पढ़ी, तब भी मेरी ऐसी हालत हो गई थी। उसका फिर से विचार करता हूं तो मेरा दिल भर आता है। मशीन की झपट लगने से ही हिन्दुस्तान पागल हो गया है। मैन्चेस्टर ने हमें जो नुकसान पहुंचाया है, उसकी तो कोई हद ही नहीं है।

हिन्दुस्तान से कारीगरी जो करीब करीब खत्म हो गई वह मैन्चेस्टर का ही काम है। लेकिन मैं भूलता हूं। मैन्चेस्टर को दोष कैसे दिया जा सकता है? हमने उसके कपड़े बनाये। बंगाल की बहादुरी का वर्णन जब मैंने पढ़ा तब मुझे हर्ष हुआ। बंगाल में कपड़े की मिलें नहीं हैं, इसलिए लोगों ने अपना असली धंधा फिर से हाथ में ले लिया। बंगाल बम्बई की मिलों को बढ़ावा देता है, वह ठीक ही है लेकिन अगर बंगाल ने तमाम मशीनों से परहेज किया होता, उनका बायकाट बहिष्कार किया होता तो और भी अच्छा होता।

मशीनें यूरोप को उजाड़ने लगी हैं और वहां की हवा अब हिन्दुस्तान में चल रही है। यंत्र आज की सभ्यता की मुख्य निशानी है और वह महापाप है, ऐसा मैं तो साफ देख सकता हूं।

बम्बई की मिलों में जो मजदूर काम करते हैं, वे गुलाम बन गये हैं। जो औरतें उनमें काम करती हैं उनकी हालत देखकर कोई भी कांप उठेगा। जब मिलों की वर्षा नहीं हुई थी। तब वे औरतें भूखों नहीं मरती थीं। मशीन की यह हवा अगर ज्यादा चली तो हिन्दुस्तान की बुरी दशा होगी। मेरी बात आपको कुछ मुश्किल मालूम होती होगी। लेकिन मुझे कहना चाहिये कि हम हिन्दुस्तान में मिलें कायम करें, उसके बजाय हमारा भला इसी में है कि हम मैन्चेस्टर को और भी रुपये भेजकर उसका सड़ा हुआ कपड़ा काम में लें। क्योंकि उसका कपड़ा काम में लेने से सिर्फ हमारे पैसे ही जायेंगे।

हिन्दुस्तान में अगर हम मैन्चेस्टर कायम करेंगे तो पैसा हिन्दुस्तान में ही रहेगा। लेकिन वह पैसा हमारा खून चूसेगा क्योंकि वह हमारी नीति को बिलकुल खत्म कर देगा। जो लोग मिलों में काम करते हैं उनकी नीति कैसी है, यह उन्होंने से पूछा जाय। उनमें से जिन्होंने रुपये जमा किये हैं उनकी नीति दूसरे पैसे वालों से अच्छी नहीं हो सकती। अमरीका के रॉकफेलरों से हिन्दुस्तान के रॉकफेलर कुछ कम हैं, ऐसा मानना निरा अज्ञान है। गरीब हिन्दुस्तान तो गुलामी से छूट सकेगा। लेकिन अनीति से पैसेवाला बना हुआ हिन्दुस्तान गुलामी से कभी नहीं छूटेगा।

मुझे तो लगता है कि हमें यह स्वीकार करना होगा कि अंग्रेजी राज्य को यहां टिकाये रखनेवाले ये धनवान लोग ही हैं। ऐसी स्थिति में ही उनका स्वार्थ सधेगा। पैसा आदमी को दीन बना देता है। ऐसी दूसरी चीज दुनियाभर में विषय भोग है। ये दोनों विषय विषमय है। उनका डंक सांप के डंक से ज्यादा जहरीला है। जब सांप काटता है तो हमारा शरीर लेकर हमें छोड़ देता है। जब पैसा या विषय काटता है तब वह शरीर, ज्ञान, मन सब कुछ ले लेता है तो भी हमारा छुटकारा नहीं होता। इसलिए हमारे देश में मिलें कायम हों, इसमें खुश होने जैसा कुछ नहीं है।

पाठक: तब क्या मिलों को बन्द कर दिया जाय?

संपादक: यह बात मुश्किल है। जो चीज स्थायी या मजबूत हो गई है, उसे निकालना मुश्किल है। इसीलिए काम शुरू न करना पहली बुद्धिमानी है। मिल मालिकों की ओर हम नफरत की निगाह से नहीं देख सकते। हमें उन पर दया करनी चाहिये। वे यकायक मिलें छोड़ दें यह तो मुमकिन नहीं है। लेकिन हम उनसे ऐसी विनती कर सकते हैं कि वे अपने इस साहस को बढ़ाएँ नहीं। अगर वे देश का भला करना चाहें तो खुद अपना काम धीरे धीरे कम कर सकते हैं। वे खुद पुराने प्रौढ पवित्र चरखे देश के हजारों घरों में दाखिल कर सकते और लोगों का बुना हुआ कपड़ा लेकर उसे बेच सकते हैं।

अगर वे ऐसा न करें, तो भी लोग खुद मशीनों का कपड़ा इस्तेमाल करना बन्द कर सकते हैं।

पाठक: यह तो कपड़े के बारे में हुआ। लेकिन यंत्र की बली तो अनेक चीजें हैं। वे चीजें या तो हमें परदेश से लेनी होंगी

या ऐसे यंत्र हमारे देश में दाखिल करने होंगे।

संपादक: सचमुच हमारे देव (मूर्तिया) भी जर्मनी के यंत्रों में बनकर आते हैं तो फिर दियासलाई या आलपिन से लेकर कांच के झाड़ फानूस की तो बात ही क्या। मेरा अपना जवाब तो एक ही है। जब ये सब चीजें यंत्र से नहीं बनती थी तब हिन्दुस्तान क्या करता था, वैसा ही वह आज भी कर सकता है। जब तक हम हाथ से आलपिन नहीं बनायेंगे तब तक उसके बिना हम अपना काम चला लेंगे। झाड़फानूस को आग लगा देंगे। मिट्टी के दीये में तेल डालकर और हमारे खेत में पैदा हुई रूई की बत्ती बना कर दीया जलायेंगे। ऐसा करने से हमारी आंखें (खराब होने से) बचेंगी। पैसे बचेंगे और हम स्वदेशी रहेंगे और स्वराज्य की धूनी जगायेंगे।

यह सारा काम सब लोग एक ही समय में करेंगे या एक ही समय में कुछ लोग यंत्र की सब चीजें छोड़ देंगे, यह संभव नहीं है। लेकिन अगर यह विचार सही होगा तो हम हमेशा शोध खोज करते रहेंगे और हमेशा थोड़ी थोड़ी चीजें छोड़ते जायेंगे। अगर हम ऐसा करेंगे तो दूसरे लोग भी ऐसा करेंगे। पहले तो यह विचार जड़ पकड़े यह जरूरी है। बाद में उसके मुताबिक काम होगा। पहले एक ही आदमी करेगा, फिर दस, फिर सौ यों नारियल की कहानी की तरह लोग बढ़ते ही जायेंगे। बड़े लोग जो काम करते हैं उसे छोटे भी करते हैं और करेंगे समझेंगे तो बात छोटी और सरल है। आपको और मुझे दूसरों के करने की राह नहीं देखना है। हम तो ज्यों ही समझ लें त्यों ही उसे शुरू कर दें। जो नहीं करेगा वह खोयेगा समझते हुए भी जो नहीं करेगा वह निरा दंभी कहलायेगा।

पाठक: ट्रामगाड़ी और बिजली की बत्ती का क्या होगा?

संपादक: यह सवाल आपने बहुत देर से किया इस सवाल में अब कोई जान नहीं रही। रेल ने अगर हमारा नाश किया है तो क्या ट्राम नहीं करती। यंत्र तो सांप का ऐसा बिल है, जिसमें एक नहीं बल्कि सैकड़ों सांप होते हैं। एक के पीछे दूसरा लगा ही रहता है। जहां यंत्र होंगे वहां बड़े शहर होंगे। जहां बड़े शहर होंगे, वहां ट्रामगाड़ी और रेलगाड़ी होगी। वहीं बिजली की बत्ती की जरूरत रहती है। आप जानते होंगे कि विलायत में भी देहातों में बिजली की बत्ती या ट्राम नहीं है।

प्रामाणिक वैद्य और डाक्टर आपको बतायेंगे कि जहां रेलगाड़ी ट्रामगाड़ी वगैरा साधन बढ़े हैं वहां लोगों की तन्दुरुस्ती गिरी हुई होती है। मुझे याद है कि यूरोप के एक शहर में जब पैसे की तंगी हो गई थी तब ट्रामों, वकीलों और डाक्टरों की आमदनी घट गयी थी लेकिन लोग तन्दुरुस्त हो गये थे। यंत्र का गुण तो मुझे एक भी याद नहीं आता जब कि उसके अवगुणों से मैं पूरी किताब लिख सकता हूं।

पाठक: यह सारा लिखा हुआ यंत्र की मदद से छापा जायगा और उसकी मदद से बांटा जायगा। यह यंत्र का गुण है या अवगुण?

संपादक: यह जहर की दवा जहर है की मिसाल है। इसमें यंत्र का कोई गुण नहीं है। यंत्र मरते मरते कह जाता है कि मुझ से बचिये, होशियार रहिये। मुझ से आपको कोई फायदा नहीं होने का। अगर ऐसा कहा जाय कि यंत्र ने इतनी ठीक कोशिश की तो यह भी उन्हीं के लिए लागू होता है जो यंत्र के लालच में फंसे हुए हैं।

लेकिन मूल बात न भूलियेगा, मन में यह तय कर लेना चाहिये कि यंत्र खराब चीज है। बाद में हम उसका धीरे धीरे नाश करेंगे। ऐसा कोई सरल रास्ता कुदरत ने ही बनाया नहीं है कि जिस चीज की हमें इच्छा हो वह तुरन्त मिल जाय। यंत्र के ऊपर हमारी मीठी नजर के बजाय जहरीली नजर पड़ेगी तो आखिर वह जायगा ही।

20. छुटकारा

-पाठक: आपके विचारों से ऐसा लगता है कि आप एक तीसरा ही पक्ष कायम करना चाहते हैं। आप एक्स्ट्रीमिस्ट भी नहीं हैं और माडरेट भी नहीं हैं।

संपादक: यहां आपकी भूल होती है। मेरे मन में तीसरे पक्ष का कोई खयाल नहीं है। सबके विचार एक से नहीं रहते। माडरेटों में भी सब एक ही विचार के हैं, ऐसा नहीं मानना चाहिये जिसे (लोगों की) सेवा ही करनी है उसके लिए पक्ष

कैसा? मैं तो माडरेटों की सेवा करूंगा और एक्स्ट्रीमिस्टों की भी करूंगा। जहां उनके विचार से मेरी राय अलग पड़ेगी वहां मैं उन्हें नम्रता से बताऊंगा और अपना काम करता चलूंगा।

पाठक: अगर आप दोनों से कहना चाहें तो क्या कहेंगे?

संपादक: एक्स्ट्रीमिस्टों से मैं कहूंगा कि आपका हेतु हिन्दुस्तान के लिए स्वराज्य हासिल करने का है। स्वराज्य आपकी कोशिश से मिलने वाला नहीं है। स्वराज्य तो सबको अपने लिए पाना चाहिये और सबको उसे अपना बनाना चाहिये। दूसरे लोग जो स्वराज्य दिला दें वह स्वराज्य नहीं है बल्कि परराज्य है। इसलिए सिर्फ अंग्रेजों को बाहर निकाला कि आपने स्वराज्य पा लिया ऐसा अगर आप मानते हो तो वह ठीक नहीं है। सच्चा स्वराज्य जो मैंने पहले बताया वही होना चाहिये। उसे आप गोला बारूद से कभी नहीं पायेंगे। गोला बारूद हिन्दुस्तान को सधेगा नहीं इसलिए सत्याग्रह पर ही भरोसा रखिये। मन में ऐसा शक भी पैदा न होने दीजिये कि स्वराज्य पाने के लिए हमें गोला बारूद की जरूरत है।

माडरेटों से मैं कहूंगा कि हम खाली आजिजी करना चाहें, यह तो हमारी हीनता होगी। उसमें हम अपना हलकापन कबूल करते हैं। अंग्रेजों से सम्बन्ध रखना हमारे लिए जरूरी है, ऐसा कहना हमारे लिए ईश्वर के चोर बनने जैसा हो जाता है। हमें ईश्वर के सिवा और किसी की जरूरत है ऐसा कहना ठीक नहीं है। और साधारण विचार करने से भी हमें लगेगा कि अंग्रेजों से बिना आज तो हमारा काम चलेगा ही नहीं, ऐसा कहना अंग्रेजों को अभिमानी बनाने जैसा होगा। अंग्रेज बोरिया बिस्तर बांधकर अगर चले जायेंगे तो हिन्दुस्तान अनाथ हो जायगा, ऐसा नहीं मानना चाहिये। अगर वे गये तो संभव है कि जो लोग उनके दबाव से चुप रहे होंगे वे लड़ेंगे। फोड़े को दबाकर रखने से कोई फायदा नहीं। उसे तो फूटना ही चाहिये।

इसलिए अगर हमारे भाग में आपस में लड़ना ही लिखा होगा, तो हम लड़ेंगे। उसमें कमजोर को बचाने के बहाने किसी दूसरे को बीच में पड़ने की जरूरत नहीं है। इसी से तो हमारा सत्यानाश हुआ है। इस तरह कमजोर को बचाना उसे और भी कमजोर बचाने के बहाने किया दूसरे को बीच में पड़ने की जरूरत नहीं है। इसी से तो हमारा सत्यानाश हुआ है। इस तरह कमजोर को बचाना उस और भी कमजोर बनाने जैसा है।

माडरेटों को इस बात पर अच्छी तरह विचार करना चाहिये। इसके बिना स्वराज्य नहीं प्राप्त हो सकता। मैं उन्हें एक अंग्रेज पादरी के शब्दों की याद दिलाऊंगा। स्वराज्य में अंधाधुंधी बरदाश्त की जा सकती है लेकिन पर राज्य की व्यवस्था हमारी कंगाली को बताती है। सिर्फ उस पादरी के स्वराज्य का और हिन्दुस्तान के रूचासल्लश के अनुसार स्वराज्य का अर्थ अलग है। हम किसी का भी जुल्म या दबाव नहीं चाहते चाहे, वह गौरा हो या हिन्दुस्तानी हो हम सबको तैरना सीखना और सिखाना है।

अगर ऐसा हो तो एक्स्ट्रीमिस्ट और माडरेट दोनों मिलेंगे मिल सकेंगे दोनों को मिलना चाहिये दोनों को एक दूसरे का डर रखने की या अविश्वास करने की जरूरत नहीं है।

पाठक: इतना तो आप दोनों कक्षों से कहेंगे परन्तु अंग्रेजों से क्या कहेंगे?

संपादक: उनसे मैं विनय से कहूंगा कि आप हमारे राजा जरूर हैं। आप अपनी तलवार से हमारे राजा हैं या हमारी इच्छा से। इस सवाल की चर्चा मुझे करने की जरूरत नहीं आप हमारे देश में रहें इसका भी मुझे द्वेष नहीं है। लेकिन राजा होते हुए भी आपको हमारे नौकर बनकर रहना होगा। आपका कहां हमें नहीं बल्कि हमारा कहा आपको करना होगा। आज तक आप इस देश से जो धन ले गये वह भले आपने हजम कर लिया लेकिन अब आगे आपका ऐसा करना हमें पसन्द नहीं होगा। आप हिन्दुस्तान में सिपाहीगिरी करना चाहें, तो रह सकते हैं। हमारे साथ व्यापार करने का लालच आपको छोड़ना होगा।

जिस सभ्यता की आप हिमायत करते हैं, उसे हम नुकसानदेह मानते हैं। अपनी सभ्यता को हम अपनी सभ्यता से कहीं ज्यादा ऊंची समझते हैं। आपको भी ऐसा लगे तो उसमें आपका लाभ ही है। लेकिन ऐसा न लगे तो भी आपको आपकी ही कहावत के मुताबिक हमारे देश में हिन्दुस्तानी होकर रहना होगा। आपको ऐसा कुछ नहीं करना चाहिये जिससे हमारे धर्म को बाधा पहुंचे। राजकर्ता होने के नाते आपका फर्ज है कि हिन्दुओं की भावना का आदर करने के लिए आप गाय का मांस खाना छोड़ दें। हम दब गये थे। इसलिए बोल नहीं सके। लेकिन आप ऐसा न समझें कि आपके इस बरताव से

हमारी भावनाओं को चोट नहीं पहुंची है। हम स्वार्थ या दूसरे भय से आज तक कह नहीं सके लेकिन अब यह कहना हमारा फर्ज हो गया है। हम मानते हैं कि आपकी कायम की हुई शालाएं और अदालतें हमारे किसी काम की नहीं हैं।

उनके बजाय हमारी पुरानी असली शालाएं और अदालतें ही हमें चाहिये। हिन्दुस्तान की आम भाषा अंग्रेजी नहीं बल्कि हिन्दी है। वह आपको सीखनी होगी और हम तो आपके साथ अपनी भाषा में ही व्यवहार करेंगे। आप रेलवे और फौज के लिए बेशुमार रुपये खर्च करते हैं यह हम से देखा नहीं जाता। हमें उसकी जरूरत नहीं मालूम होती। रूस का डर आपको होगा, हमें नहीं है। रूसी आयेंगे तब हम उनसे निबट लेंगे आप होंगे तो हम दोनों मिलकर उनसे निबट लेंगे। हमें विलायती या यूरोपी कपड़ा नहीं चाहिये। इस देश में पैदा होने वाली चीजों से ही हम अपना काम चला लेंगे। आपकी एक आंख मैंचेस्टर पर और दूसरी हम पर रहे, यह अब नहीं पुरायेगा। आपका और हमारा स्वार्थ एक ही है, इस तरह आप बरतेंगे, तभी हमारा साथ बना रह सकता है।

आपसे यह सब हम बेअदबी से नहीं कह रहे हैं। आपके पास हथियार बल है, भारी जहाजी सेना है। उसके खिलाफ वैसी ही ताकत से हम नहीं लड़ सकते, लेकिन आपको अगर ऊपर कही गई बात मंजूर न हो, तो आपसे हमारी नहीं बनेगी। आपकी मरजी में आये तो और मुमकिन हो तो आप हमें तलवार से काट सकते हैं, मरजी में आये तो हमें तोप से उड़ा सकते हैं हमें जो पसंद नहीं है, वह अगर आप करेंगे तो हम आपकी मदद नहीं करेंगे, और बगैर हमारी मदद के आप एक कदम भी नहीं चल सकेंगे।

संभव है अपनी सत्ता के मद में हमारी इस बात को आप हंसी में उड़ा दें। आपका हंसना बेकार है, ऐसा आज शायद हम नहीं दिखा सकें, लेकिन अगर हममें कुछ दम होगा तो आप देखेंगे कि आपका मद बेकार है और आपका हंसना (विनाश काल की) विपरीत बुद्धि की निशानी है।

हम मानते हैं कि आप स्वभाव से धार्मिक राष्ट्र की प्रजा है। हम तो धर्मस्थान में ही बसे हुए हैं। आपका और हमारा कैसे साथ हुआ इसमें उतरना फिजूल है। लेकिन अपने इस सम्बन्ध का हम दोनों अच्छा उपयोग कर सकते हैं।

आप हिन्दुस्तान में आनेवाले जो अंग्रेज हैं, वे अंग्रेज प्रजा के सच्चे नमूने नहीं हैं और हम जो आधे अंग्रेज जैसे बन गये हैं वे भी सच्ची हिन्दुस्तानी प्रजा के नमूने नहीं कहे जा सकते। अंग्रेज प्रजा को अगर आपकी करतूतों के बारे में सब मालूम हो जाय तो वह आपके कामों के खिलाफ हो जाय। हिन्द की प्रजा ने तो आपके साथ संबंध थोड़ा ही रखा है।

आप अपनी सभ्यता को, जो दरअसल बिगाड़ करने वाली है, छोड़ कर अपने धर्म की छानबीन करेंगे तो आपको लगेगा कि हमारी मांग ठीक है। इसी तरह आप हिन्दुस्तान में रह सकते हैं। अगर उस ढंग से आप यहां रहेंगे तो आप से हमें जो थोड़ा सीखना है वह हम सीखेंगे और हमसे जो आपको बहुत सीखना है, वह आप सीखेंगे। इस तरह हम (एक दूसरे से) लाभ उठाएंगे और सारी दुनिया को लाभ पहुंचाएंगे। लेकिन यह तो तभी हो सकता है, जब हमारे संबंध की जड़ धर्म क्षेत्र में जमे।

पाठक: राष्ट्र से आप क्या कहेंगे?

संपादक: राष्ट्र कौन?

पाठक: अभी तो आप जिस अर्थ में यह शब्द काम में लेते हैं उसी अर्थ वाला राष्ट्र यानी जो लोग यूरोप की सभ्यता में रंगे हुए हैं, जो स्वराज्य की आवाज उठा रहे हैं।

संपादक: इस राष्ट्र से मैं कहूंगा कि जिस हिन्दुस्तानी को (स्वराज्य की) सच्ची खुमारी यानी मस्ती चढ़ी होगी वही अंग्रेजों से ऊपर की बात कह सकेगा। अक्सर उनके रोब से नहीं दबेगा। सच्ची मस्ती तो उसी को चढ़ सकती है, जो ज्ञानपूर्वक समझ बूझकर यह मानता हो कि हिन्द की सभ्यता सबसे अच्छी है और यूरोप की सभ्यता चार दिन की चांदनी है। वैसे सभ्यतार्य तो आज तक कई हो गयीं और मिट्टी में मिल गयी। आगे भी कई होंगी और मिट्टी में मिल जायेंगी।

सच्ची खुमारी उसी को हो सकती है जो आत्मबल अनुभव करके शरीर बल से नहीं दबेगा और निडर रहेगा। तथा सपने में भी तोप बल का उपयोग करने की बात नहीं सोचेगा। सच्ची खुमारी उसी हिन्दुस्तानी को रहेगी जो आज की लाचार

हालत से बहुत ऊब गया होगा और जिसने पहले से ही जहर का प्याला पी लिया होगा। ऐसा हिन्दुस्तानी अगर एक ही होगा तो वह भी ऊपर की बात अंग्रेजों से कहेगा और अंग्रेजों को उसकी बात सुननी पड़ेगी। ऊपर की मांग मांग नहीं है वह हिन्दुस्तानियों के मन की दशा को बताती है। मांगने से कुछ नहीं मिलेगा, वह तो हमें खुद लेना होगा। उसे लेने की हममें ताकत होनी चाहिये यह ताकत उसी में होगी:-

- (1) जो अंग्रेजी भाषा का उपयोग लाचारी से ही करेगा।
- (2) जो वकील होगा तो अपनी वकालत छोड़ देगा और खुद घर में चरखा चलाकर कपड़े बुन लेगा।
- (3) जो वकील होने के कारण अपने ज्ञान का उपयोग सिर्फ लोगों को समझाने और लोगों की आंखें खोलने में करेगा।
- (4) जो वकील होकर वादी प्रतिवादी मुद्दई और मुद्दालेह के झगड़ों में नहीं पड़ेगा। अदालतों को छोड़ देगा और अपने अनुभव से दूसरों को अदालतें छोड़ने के लिए समझायेगा।
- (5) जो वकील होते हुए भी जैसे वकालत छोड़ेगा वैसे न्यायाधीशपन भी छोड़ेगा।
- (6) जो डाक्टर होते हुए भी अपना पेशा छोड़ेगा और समझेगा कि लोगों की चमड़ी चोंथने के बजाय बेहतर है कि उनकी आत्मा को छुआ जाय और उसके बारे में शोध खोज करके उन्हें तंदुरुस्त बनाया जाय।
- (7) जो डाक्टर होने से समझेगा कि खुद चाहे जिस धर्म का हो लेकिन अंग्रेजी वैदकशालाओं फार्मसियों में जीवों पर जो निर्दयता की जाती है वैसी निर्दयता से (बनी हुई दवाओं से) शरीर को चंगा करने के बजाय बेहतर है कि शरीर रोगी रहे।
- (8) जो डाक्टर होने पर भी खुद चरखा चलायेगा और जो लोग बीमार होंगे उन्हें उनकी बीमारी का सही कारण बताकर उसे दूर करने के लिए कहेगा। निकम्मी दवाएं देकर उन्हें गलत लाड़ नहीं लड़ायेगा। वह तो यही समझेगा कि निकम्मी दवाएं न लेने से बीमार की देह अगर गिर भी जाय तो उससे दुनिया अनाथ नहीं हो जायगी और यही मानेगा कि उसने बीमार पर सच्ची दया की है।
- (9) जो धनी होने पर भी धन की परवाह किये बिना अपने मन में होगा वही कहेगा और बड़े से बड़े सताधीश की भी परवाह न करेगा।
- (10) जो धनी होने से अपना रुपया चरखे चालू करने में खर्चेगा और खुद सिर्फ स्वदेशी माल का इस्तेमाल करके दूसरों को भी ऐसा करने के लिए बढ़ावा देगा।
- (11) दूसरे हर हिन्दुस्तानी की तरह जो यह समझेगा कि वह समय पश्चाताप का, प्रायश्चित का और शोक का है।
- (12) जो दूसरे हर हिन्दुस्तानी की तरह यह समझेगा कि अंग्रेजों का कसूर निकालना बेकार है। हमारे कसूर की वजह से वे हिन्दुस्तान में आये, हमारे कसूर के कारण ही वे यहां रहते हैं और हमारा कसूर दूर होगा तब वे यहां से चले जायेंगे या बदल जायेंगे।
- (13) दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह जो यह समझेगा कि मातम के वक्त मौज शौक नहीं हो सकते। जब तक हमें चैन नहीं है तब तक हमारा जेल में रहना या देश निकाला भोगना ही ठीक है।
- (14) जो दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह यह समझेगा कि लोगों को समझाने के बहाने जेल में न जाने की खबरदारी रखना निरा मोह है।
- (15) जो दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह यह समझेगा कि कहने से करने का असर अद्भुत होता है। हम निडर होकर जो मन में है वही कहेंगे और इस तरह कहने का जो नतीजा आये उसे सहेंगे। तभी हम अपने कहने का असर दूसरों पर डाल सकेंगे।
- (16) जो दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह यह समझेगा कि हम दुख सहन करके ही बंधन यानी गुलामी से छुट सकेंगे।
- (17) जो दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह समझेगा कि अंग्रेजों की सभ्यता को बढ़ावा देकर हमने जो पाप किया है, उसे धो डालने के लिए अगर हमें मरने तक भी अंडमान में रहना पड़े तो वह कुछ ज्यादा नहीं होगा।

(18) जो दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह समझेगा कि कोई भी राष्ट्र दुख सहन किये बिना ऊपर चढ़ा नहीं है। लड़ाई के मैदान में भी दुख ही कसौटी होता है न कि दूसरे को मारना। सत्याग्रह के बारे में भी ऐसा ही है।

(19) जो दूसरे हिन्दुस्तानियों की तरह समझेगा कि यह कहना कुछ न करने के लिए एक बहाना भर है कि जब सब लोग करेंगे तब हम भी करेंगे। हमें ठीक लगता है इसलिए हम करें। जब दूसरों को ठीक लगेगा तब वे करेंगे, यही करने का सच्चा रास्ता है। अगर मैं स्वादिष्ट भोजन देखता हूं तो उसे खाने के लिए दूसरे की राह नहीं देखता। ऊपर कहे मुताबिक प्रयत्न करना, दुख सहना यह स्वादिष्ट भोजन है। ऊबकर लाचारी से करना या दुख सहना निरी बेगार है।

पाठक: सब ऐसा कब करेंगे और कब उसका अंत आयेगा?

संपादक: आप फिर भूलते हैं। सबकी न तो मुझे परवाह है, न आपको होनी चाहिये। आप अपना देख लीजिये मैं अपना देख लूंगा, यह स्वार्थ वचन माना जाता है लेकिन यह परमार्थ वचन भी है। मैं अपना उजालूंगा, अपना भला करूंगा तभी दूसरे का भला कर सकूंगा। अपना कर्तव्य मैं कर लूँ, इसी में काम की सारी सिद्धियाँ समाई हुई हैं।

आपको विदा करने से पहले फिर एक बार मैं यह दोहराने की इजाजत चाहता हूँ कि

(1) अपने मन का राज्य स्वराज्य है।

(2) उसकी कुंजी सत्याग्रह, आत्मबल या करुणा बल है।

(3) उस बल को आजमाने के लिए स्वदेशी को पूरी तरह अपनाने की जरूरत है।

(4) हम जो करना चाहते हैं वह अंग्रेजों के लिए (हमारे मन में) द्वेष है, इसलिए या उन्हें सजा देने के लिए नहीं करें बल्कि इसलिए करें कि ऐसा करना हमारा कर्तव्य है। मतलब यह कि अंग्रेज अगर नमक महसूल रद्द कर दें, लिया हुआ धन वापस कर दें, सब हिन्दुस्तानियों को बड़े बड़े ओहदे दे दें और अंग्रेजी लश्कर हटा लें तो हम उनकी मिलों का कपड़ा पहनेंगे या अंग्रेजी भाषा काम में लायेंगे या उनकी हुनर कला का उपयोग करेंगे सो बात नहीं है। हमें यह समझना चाहिये कि वह सब दरअसल नहीं करने जैसा है, इसलिए हम उसे नहीं करेंगे। मैंने जो कुछ कहा है वह अंग्रेजों के लिए द्वेष होने के कारण नहीं बल्कि उनकी सभ्यता के लिए द्वेष होने के कारण कहा है।

मुझे लगता है कि हमने स्वराज्य का नाम तो लिया लेकिन उसका स्वरूप हम नहीं समझे हैं। मैंने उसे जैसा समझा है वैसा यहां बताने की कोशिश की है। मेरा मन गवाही देता है कि ऐसा स्वराज्य पाने के लिए मेरा यह शरीर समर्पित है। मेरा मन गवाही देता है कि ऐसा स्वराज्य पाने के लिए मेरा यह शरीर समर्पित है।

परिशिष्ट-1

हिन्द स्वराज्य के हिन्दी अनुवाद के लिए गांधीजी ने जो प्रस्तावना लिखी थी उसमें उन्होंने मिलों के बारे में नीचे की बात कही थी:

”यह पुस्तक मैंने सन् 1909 में लिखी थी। 12 वर्ष के अनुभव के बाद भी मेरे विचार जैसे उस समय थे वैसे ही आज हैं। मैं आशा करता हूँ कि पाठक मेरे इन विचारों का प्रयोग करके उनकी सिद्धता अथवा असिद्धता का निर्णय कर लेंगे।

मिलों के सम्बन्ध में मेरे विचारों में इतना परिवर्तन हुआ है कि हिन्दुस्तान की आज की हालत में मैनचेस्टर के कपड़े के बजाय हिन्दुस्तान की मिलों को प्रोत्साहन देकर भी अपनी जरूरत का कपड़ा हमें अपने देश में ही पैदा कर लेना चाहिये।

‘हिन्द स्वराज्य’ के अंग्रेजी अनुवाद की प्रस्तावना लिखते हुए गांधी जी ने इस पुस्तक का एक ग्राम्य शब्द सुधारने की इच्छा बताई थी:

”इस समय इस पुस्तक को इसी रूप में प्रकाशित करना मैं आवश्यक समझता हूँ परन्तु यदि इसमें मुझे भी सुधार करना हो तो मैं एक शब्द सुधारना चाहूंगा। एक अंग्रेज महिला मित्र को मैंने वह शब्द बदलने का वचन दिया है। पार्लियामेंट को मैंने वेश्या कहा है। यह शब्द उन बहन को पसंद नहीं है। उनके कोमल हृदय को इस शब्द के ग्राम्य भाव से दुःख पहुंचा है।”